राजस्थान में शुष्क बागवानी की उन्नत तकनीकियां

राजस्थान में शुष्क बागवानी की उन्नत तकनीकियां

पी. एल. सरोज | एस. आर. मीना

बी. डी. शर्मा

भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान

बीछवाल, बीकानेर-334 006 (राजस्थान)

राजस्थान में शुष्क बागवानी की उन्नत तकनीकियां

पी. एल. सरोज
एस. आर. मीना
बी. डी. शर्मा

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
(भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद)
बीकानेर–334 006 (राजस्थान)

उद्धरणः
सरोज, पी. एल., मीना, एस. आर. और शर्मा, बी. डी. (2020). राजस्थान में शुष्क बागवानी की उन्नत तकनीकियां, भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर पेज 1–122

वर्षः
2020

प्रकाशकः
प्रो. पी. एल. सरोज
निदेशक
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीछवाल, बीकानेर–334 006 (राजस्थान)

सम्पादकः
प्रो. पी. एल. सरोज
डॉ. एस. आर. मीना
डॉ. बी. डी. शर्मा

तकनीकी सहयोगः
प्रेम प्रकाश पारीक
महावीर कुमार जैन
भोज राज खत्री
संजय पाटिल

मुद्रणः
मैसर्स रॉयल ऑफसेट प्रिन्टर्स, ए89/1 नारायणा इण्डस्ट्रियल एरिया फेस–1, नई दिल्ली–110028 # 0981162225

अनुक्रमणिका

क्र.स.		विवरण	पेज नं.
1.	प्रौद्योगिकी–01	बेर उत्पादन की उन्नत तकनीकी	1
2.	प्रौद्योगिकी–02	किन्नौं की लाभदायक खेती के लिए समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन	4
3.	प्रौद्योगिकी–03	मौसम्बी उत्पादन तकनीक	6
4.	प्रौद्योगिकी–04	खजूर उत्पादन की उन्नत तकनीक	8
5.	प्रौद्योगिकी–05	अनार उत्पादन की उन्नत तकनीक	11
6.	प्रौद्योगिकी–06	बेल उत्पादन की उन्नत तकनीक	13
7.	प्रौद्योगिकी–07	लसोड़ा–थार बोल्ड का जैविक उत्पादन	16
8.	प्रौद्योगिकी–08	करौंदा उत्पादन की उन्नत तकनीक	19
9.	प्रौद्योगिकी–09	शुष्क क्षेत्र में फालसा उत्पादन तकनीक	21
10.	प्रौद्योगिकी–10	नींबू उत्पादन की तकनीक	24
11.	प्रौद्योगिकी–11	शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में बेर आधारित फसल प्रणाली	26
12.	प्रौद्योगिकी–12	फल वृक्षों का प्रवर्धन	29
13.	प्रौद्योगिकी–13	फलों की परिपक्वता का निर्धारण एवं निर्जलीकृत उत्पाद	32
14.	प्रौद्योगिकी–14	गर्म शुष्क बारानी क्षेत्रों में खेजड़ी "थार शोभा" लगाएं	37
15.	प्रौद्योगिकी–15	काचरीः ए.एच.के.–119 की उत्पादन तकनीक	40
16.	प्रौद्योगिकी–16	फूट ककड़ीः ए.एच.एस.–82 की उच्च उत्पादन की तकनीक	43
17..	प्रौद्योगिकी–17	लौकी उत्पादन की उन्नत तकनीक	45
18.	प्रौद्योगिकी–18	धारीदार तोरई की उन्नत किस्म "थार करणी" उगाएं	47
19.	प्रौद्योगिकी–19	तर–ककड़ी की उन्नत किस्म–थार शीतल	50
20.	प्रौद्योगिकी–20	ग्वार फली की उन्नत किस्म–थार भादवी	53
21.	प्रौद्योगिकी–21	उत्तर पश्चिमी राजस्थान में आलू उत्पादन की उन्नत तकनीक	55
22.	प्रौद्योगिकी–22	प्याज उत्पादन की उन्नत तकनीक	57
23.	प्रौद्योगिकी–23	कद्दूवर्गीय सब्जियों का लो–टनल तकनीक से अगेती उत्पादन	60
24.	प्रौद्योगिकी–24	कद्दूवर्गीय सब्जियों में मोजेक रोग का समेकित प्रबंधन	62

क्र.स.		विवरण	पेज नं.
25.	प्रौद्योगिकी–25	कद्दूवर्गीय सब्जियों में पत्ती झुलसा रोग का समेकित प्रबंधन	64
26.	प्रौद्योगिकी–26	बेर में फल मक्खी का समेकित कीट प्रबंधन	66
27.	प्रौद्योगिकी–27	बेल में तितली प्रकोप का प्रबंधन	68
28.	प्रौद्योगिकी–28	कददूवर्गीय सब्जियों में फल मक्खी का समेकित कीट प्रबन्धन	70
29.	प्रौद्योगिकी–29	लसोड़ा में टिंजिड बग (*डिक्टाइला चौरिआनी*) का प्रबंधन	72
30.	प्रौद्योगिकी–30	काजरी बेर–2018 (बेर की सबसे अगेती किस्म)	77
31.	प्रौद्योगिकी–31	अनार की नई किस्म–काजरी विशाल	78
32.	प्रौद्योगिकी–32	लसोड़ा की उन्नत किस्म–मरु समृद्धि	79
33.	प्रौद्योगिकी–33	करौन्दे की उन्नत किस्म–मरु गौरव	80
34.	प्रौद्योगिकी–34	बेर के पुराने और अनुत्पादक बागों का जीर्णोद्धार	82
35.	प्रौद्योगिकी–35	शुष्क क्षेत्र में अनार की खेती के लिए अभिनव जल और ऊर्जा संचयन मॉडल	84
36.	प्रौद्योगिकी–36	ग्रीनहाउस खीरा में कलम (ग्राफ्टिंग) तकनीक द्वारा अधिक उत्पादन	85
37.	प्रौद्योगिकी–37	ग्रीनहाउस खीरा में कलम (ग्राफ्टिंग) तकनीक द्वारा शरद ऋतु में कम तापक्रम पर जल्द व अधिक उत्पादन	86
38.	प्रौद्योगिकी–38	टमाटर में कलम (ग्राफ्टिंग) तकनीक द्वारा सामान्य दशा व कम पानी की दशा में अधिक उत्पादन	87
39.	प्रौद्योगिकी–39	शुष्क क्षेत्र में टमाटर की सफल खेती के लिए उपयुक्त संरक्षित संरचना	88
40	प्रौद्योगिकी–40	लसोड़े के फलों का निर्जलीकरण	89
41	प्रौद्योगिकी–41	अजमेर धनिया–1	93
42	प्रौद्योगिकी–42	अजमेर धनिया–2	93
43	प्रौद्योगिकी–43	अजमेर सौंफ–3	93
44	प्रौद्योगिकी–44	अजमेर मैथी–5	93
45	प्रौद्योगिकी–45	अजमेर कलौंजी–20	94
46	प्रौद्योगिकी–46	बीजीय मसालों के मूल्य सवंर्धित उत्पाद	94
47	प्रौद्योगिकी–47	जैविक अगत उत्पादन	94
48	प्रौद्योगिकी–48	बेल के जड़ गलन रोग एवं जड़ छेदक कीट का समेकित प्रबन्धन	97

क्र.स.		विवरण	पेज नं.
49	प्रौद्योगिकी–49	बेर की विभिन्न फल अवस्थाओं पर छाछ्या रोग नियंत्रण में जैव रासायनों की भूमिका	97
50	प्रौद्योगिकी–50	बेर के छाछ्या रोग का किफायती नियंत्रण	98
51	प्रौद्योगिकी–51	आँवले के रोली रोग के संक्रमण एवं फैलाव में जलवायु घटकों का प्रभाव	98
52	प्रौद्योगिकी–52	आँवला रोली रोग नियंत्रण हेतु छिड़काव समय सारिणी का निर्धारण	99
53	प्रौद्योगिकी–53	आँवला के रोली रोग व पत्ती पिटिका कीट का समन्वित कीट–व्याधि प्रबन्ध	99
54	प्रौद्योगिकी–54	आँवला के फल तुड़ाई पश्चात् बीमारियों का प्रबन्धन	100
55	प्रौद्योगिकी–55	आँवला रोली रोग का जैविक नियन्त्रण	100
56	प्रौद्योगिकी–56	बेर में समन्वित कीट प्रबन्धन	101
57	प्रौद्योगिकी–57	बेर की गुठली की सुरसरी (स्टोन विविल) का नियंत्रण	101
58	प्रौद्योगिकी–58	बेर की फलमक्खी का नियंत्रण	102
59	प्रौद्योगिकी–59	आंवला में सूक्ष्म छिद्र भेदक (शॉट हॉल बोरर) की रोकथाम	102
60	प्रौद्योगिकी–60	आँवला में लीफ गॉल मिज की जनसंख्या की गतिशीलता का अध्ययन	103
61	प्रौद्योगिकी–61	आँवला में पत्ती फफोला कीट (लीफ गॉल मिज) एवं तना संपुट लट (स्टेम केपसूल केटरपिलर) के द्वारा होने वाले नुकसान से बचाव के उपाय	104
62	प्रौद्योगिकी–62	ऑवला में सूक्ष्म छिद्र भेदक (शॉट हॉल बोरर) जाइलेबोरस स्पी. की मौसमी गतिविधि	105
63	प्रौद्योगिकी–63	अनार में छालभक्षी कीट का नियंत्रण	105
64	प्रौद्योगिकी–64	बेर में पाला सहिष्णु अनुप्रयोग	106
65	प्रौद्योगिकी–65	राजस्थान के बेर उद्यानों में पौषक तत्वों का अध्ययन	107
66	प्रौद्योगिकी–66	बेर में लवण सहिष्णुता अध्ययन	108
67	प्रौद्योगिकी–67	बेर में प्रवर्धन	108
68	प्रौद्योगिकी–68	बेर में पोषण	109
69	प्रौद्योगिकी–69	बेर में मूलवृन्त परीक्षण	109
70	प्रौद्योगिकी–70	बेर की किस्म का चयन	110
71	प्रौद्योगिकी–71	आँवले में प्रवर्धन अध्ययन	110

क्र.स.		विवरण	पेज नं.
72	प्रौद्योगिकी–72	आँवले में किस्म परीक्षण	110
73	प्रौद्योगिकी–73	आँवले में पाले से बचाव	111
74	प्रौद्योगिकी–74	अनार में फल का फटना	111
75	प्रौद्योगिकी–75	अनार की किस्मों का चयन	111
76	प्रौद्योगिकी–76	बेल की किस्मों का बूंद–बूंद सिंचाई पद्धति में मूल्यांकन	115
77	प्रौद्योगिकी–77	किन्नौं में चूसक कीटों के नियंत्रण हेतु कीटनाशकों का समन्वित कीट नियंत्रण	115
78	प्रौद्योगिकी–78	मिर्च में सिंचाई प्रबंधन	116
79	प्रौद्योगिकी–79	फर्टिगेशन से मिर्च उगायें	116
80	प्रौद्योगिकी–80	किन्नौं में सूक्ष्म पोषकतत्व सारणी	117
81	प्रौद्योगिकी–81	किन्नौं का खुली–जड़ पौधरोपण	117
82	प्रौद्योगिकी–82	बैंगन में उर्वरक प्रबंधन	118
83	प्रौद्योगिकी–83	बैंगन में सिंचाई प्रबंधन	118
84	प्रौद्योगिकी–84	टमाटर की फसल में भूमि का ऊर्ध्वधर उपयोग	121
85	प्रौद्योगिकी–85	उठी हुई क्यारी में टमाटर की दो पंक्ति विधि से बुवाई	121
86	प्रौद्योगिकी–86	पपीता की फसल विन्यास में परिवर्तन कर उत्पादन लागत में कमी	122
87	प्रौद्योगिकी–87	बेर में कंटाई–छंटाई के समय में परिवर्तन कर फल झड़न की समस्या का निराकरण	122

कैलाश चौधरी
Kailash Choudhary

कृषि एवं किसान कल्याण राज्य मंत्री
भारत सरकार

Minister of State For Agricultur
Farmers welfare
Government of India

सत्यमेव जयते

संदेश

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली, भारत सरकार के कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय का एक महत्वपूर्ण अंग है। किसानों की वर्ष 2022 तक आय को दोगुनी करने का जो बीड़ा हमारी सरकार ने उठाया है उसको पूरा करवाने में परिषद् के इन संस्थानों का योगदान महत्वपूर्ण होगा। परिषद् ने राजस्थान प्रदेश के सभी संस्थानों, कृषि विश्वविद्यालयों, कृषि विज्ञान केन्द्रों, राज्य के कृषि से सम्बन्धित अन्य विभागों एवं कृषकों के साथ दिनांक 13 जुलाई 2019 को नई दिल्ली में विस्तृत विचार मंथन किया। कृषि में नित नए प्रयोगों एवं नव तकनीकियों की आवश्यकता दिनों–दिन बढ़ती जा रही है, इसमें विज्ञान व वैज्ञानिकों की भूमिका अहम् होती है। वर्तमान समय में पानी की कमी होना एक चुनौती है। ऐसे में शुष्क बागवानी का महत्व अत्यधिक बढ़ जाता है और इसमें भाकृअनुप के संस्थान और इस क्षेत्र के राज्य कृषि विश्वविद्यालय संयुक्त रूप से अहम् भूमिका निभा सकते हैं।

इसी को ध्यान में रखते हुए **''राजस्थान में शुष्क बागवानी फसलों की उन्नत तकनीकियां''** विषय पर 15 नवम्बर, 2019 को भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में एक दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसमें भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के संस्थानों यथा–भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, भाकृअनुप–केन्द्रीय रूक्ष क्षेत्रीय अनुसंधान संस्थान, जोधपुर, भाकृअनुप–राष्ट्रीय बीजीय मसाला अनुसंधान केंद्र, अजमेर, भाकृअनुप–अटारी, जोधपुर और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों : स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर, श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर तथा जोधपुर कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर ने भाग लिया। इस कार्यशाला में शुष्क बागवानी की विकसित नव तकनीकियों और उन्नत किस्मों पर सभी संस्थानों ने चर्चा किया और यह निर्णय लिया कि शुष्क बागवानी की उन्नत तकनीकियों को लिपिबद्ध करके किसानों को उपलब्ध कराया जाय।

इस दिशा में राजस्थान में स्थिति भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के संस्थानों एवं कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा किये गये प्रयासों की सराहना करता हूँ एवं इस पुस्तिका में वर्णित तकनीकों का लाभ प्रदेश के कृषकों को अवश्य मिलेगा ऐसी कामना करता हूँ। पुस्तिका के सम्पादन के लिए डॉ. पी. एल. सरोज एवं उनकी टीम को धन्यवाद देता हूँ।

(कैलाश चौधरी)

त्रिलोचन महापात्र, पीएच.डी.
सचिव एवं महानिदेशक

TRILOCHAN MOHAPATRA, Ph.D.
SECRETARY & DIRECTOR GENERAL

भारत सरकार
कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग एवं
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली 110 001

GOVERNMENT OF INDIA
DEPARTMENT OF AGRICULTURAL RESEARCH & EDUCATION
AND
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
MINISTRY OF AGRICULTURE AND FARMERS WELFARE
KRISHI BHAVAN, NEW DELHI 110 001
Tel.: 23382629; 23386711 Fax: 91-11-23384773
E-mail: dg.icar@nic.in

संदेश

देश में कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता सीमित है, जो बढ़ती जनसंख्या व औद्योगिकीकरण के कारण दिन–प्रतिदिन कम होती जा रही है। इसके अलावा, अच्छी भूमि में खेती के लिए एक सीमित विकल्प है। इन परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुये बागवानी हेतु बंजर भूमियों का उपयोग एक अच्छा विकल्प दिखाई देता है। भारत विश्व स्तर पर बागवानी क्षेत्र में फल और सब्जियों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है एवं विगत वर्षों में अप्रत्याशित प्रगति की है, जिससे बागवानी उत्पादन खाद्यान्न उत्पादन से अधिक हो गया है। भारत का गर्म शुष्क क्षेत्र देश के कुल भौगोलिक क्षेत्र का लगभग 12 प्रतिशत है, जो कि राजस्थान, गुजरात, आंध्र प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, कर्नाटक और महाराष्ट्र जैसे राज्यों में फैला हुआ है। इस क्षेत्र में कई बाधाओं के बावजूद, भूमि व श्रम प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं और सफल बागवानी की प्रबल संभावना है। विभिन्न बागवानी फसलों के लिए गैर–पारंपरिक क्षेत्रों की क्षमता का उपयोग करने के लिये शुष्क बागवानी की उन्नत प्रौद्योगिकियों को अपनाना होगा। बागवानी फसलें किसानों को इसकी खेती की सीमित अवधि के भीतर अधिकतम लाभ प्रदान कर सकती हैं। अतः किसानों को नवीनतम जानकारी एवं उन्नत तकनीकियों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित किये जाने की आवश्यकता है। सरकार भी इस दिशा में निरंतर प्रयासरत है एवं किसानों की आय बढ़ाने को लेकर प्रतिबद्ध है। इस दिशा में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के संस्थानों, राज्य कृषि विश्वविद्यालयों एवं कृषि विज्ञान केन्द्रों का योगदान उल्लेखनीय है।

उपरोक्त तथ्यों को देखते हुए, मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि राजस्थान में शुष्क बागवानी की उन्नत तकनीकियों पर आधारित इस हिंदी प्रकाशन से न केवल स्थानीय जलवायु परिस्थितियों के अनुसार विकसित तकनीकियों को किसानों तक पहुँचाने में मदद मिलेगी, अपितु इन्हें अपनाने से किसानों की आय में भी वृद्धि होगी। मैं, भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय शुष्क बावानी संस्थान, बीकानेर को **''राजस्थान में शुष्क बागवानी की उन्नत तकनीकियां''** विषय पर इस तरह के एक उपयोगी प्रकाशन के लिए बधाई एवं शुभकामनाएं देता हूं।

दिनांकः 13 जुलाई 2020

(टी. महापात्र)

डॉ. आनन्द कुमार सिंह
उप महानिदेशक (बागवानी विज्ञान)
बागवानी विज्ञान संभाग
Dr. Anand Kumar Singh
Deputy Director General (Hort. Sci.)
Horticultural Science Division

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन–II
पूसा, नई दिल्ली –110 012
INDIAN COUNCIL OF AGRICULTURAL RESEARCH
KRISHI ANUSANDHAN BHAWAN-II
PUSA, NEW DELHI-110 012
दूरभाष सं.: 91-11-25841976, फैक्स न.: 91-11-25841976
Ph.: 91-11-25842068(O), Fax: 91-11-25841976
E-mail: ddghort@gmail.com; aksingh36@yahoo.com

संदेश

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली के तत्वावधान में राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्र में विभिन्न अनुसंधान संस्थानों एवं कृषि विश्वविद्यालयों के माध्यम से नई कृषि–बागवानी तकनीकियां किसानों तक पंहुचा रहे हैं। पश्चिमी राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों में बागवानी से संबंधित शोधकार्य भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर, भाकृअनुप–राष्ट्रीय बीजीय मसाला केन्द्र, तबीजी, अजमेर, भाकृअनुप–केन्द्रीय मरुक्षेत्र अनुसंधान संस्थान, जोधपुर एवं इस क्षेत्र में स्थित कृषि विश्वविद्यालयों (जोधपुर, जोबनेर एवं बीकानेर) में हो रहा है। इन सस्थाओं ने किसानों के हित के लिए शुष्क बागवानी की उन्नत प्रौद्योगिकियों को विकसित किया है। बागवानी फसलें किसानों को पारम्परिक फसलों की अपेक्षा कम लागत में अधिक लाभ प्रदान करती हैं। किसानों की आय को बढ़ाने के लिए बागवानी फसलों का समावेश समय की आवश्यकता है। इन सभी तथ्यों को सामने रखते हुए मुझे आशा है कि 'शुष्क बागवानी की विकसित उन्नत तकनीकियों' पर आधारित इस हिंदी प्रकाशन से न केवल किसानों की आय में वृद्धि होगी साथ ही साथ जलवायु परिस्थितियों में भी सुधार होगा।

मैं, भाकृअनुप.–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर को **"राजस्थान में शुष्क बागवानी की उन्नत तकनीकियाँ"** के इस तकनीकी प्रकाशन के लिए बधाई एवं शुभकामनाएं देता हूँ।

दिनांक: 14 अगस्त 2020

(आनन्द कुमार सिंह)

प्रो. (डॉ.) पी. एल. सरोज
निदेशक

निदेशक
भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान
बीछवाल, बीकानेर (राजस्थान)
ई मेलः ciah@nic.in
दूरभाषः 0151 2250147 फैक्सः 0151–2250145

प्राक्कथन

शुष्क क्षेत्रों की भौगोलिक एवं जलवायुवीय परिस्थितियाँ बहुत विकट हैं। इन क्षेत्रों में वार्षिक औसत वर्षा बहुत कम होती है, गर्मीयों में तापमान बहुत ज्यादा तो सर्दी के मौसम में बहुत कम हो जाता है। प्रायः सूखे की दशा उत्पन्न होना एवं धूल भरी आंधी चलना एक आम समस्या है। फसलों पर न केवल सूखे अपितु पाले का भी प्रभाव पड़ता है। सिंचाई के सीमित साधन है तथा भू जल लवणीय है। मृदा बलुई है जिसकी जल धारण क्षमता एवं उर्वरता बहुत कम है। यहाँ का किसान प्रायः वर्षा आधारित बाजरा, मक्का, ग्वार, मोठ, काचरी, मतीरा आदि की खेती करते है। कुछ विषम परिस्थितियों में उगने वाली प्राकृतिक वनस्पतियाँ जैसे खेजड़ी, कुमट, केर, झरबेर एव सेंवण–धामण घास उनकी आजीविका एवं पशुओं के चारे के लिए अत्यन्त लाभकारी है। ऐसी परिस्थितियों में खेती करना एवं खेती से परिवार का पालन पोषण करना बहुत कठिन है।

उक्त परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए केन्द्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार ने भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के तत्वाधान में राजस्थान प्रदेश की एक बैठक नई दिल्ली में दिनांक 13 जुलाई, 2019 को आहुत की। इस बैठक का मुख्य एजेंडा ''राजस्थान के किसानों की आय कैसे बढ़े एवं किसान कैसे आत्मनिर्भर बनें?'' था। इस बैठक में राज्य के सभी विश्वविद्यालयों, परिषद के संस्थानों, कृषि विज्ञान केन्द्रों के अतिरिक्त बड़ी संख्या में किसान, उद्यमी और गैर सरकारी संगठनों के सदस्य उपस्थित थे। इस बैठक को श्री नरेन्द्र सिंह तोमर, माननीय केन्द्रीय कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री, भारत सरकार, श्री कैलाश चौधरी एवं श्री परषोत्तम रूपाला, माननीय केन्द्रीय कृषि एवं किसान कल्याण राज्य मंत्री, भारत सरकार, डॉ. त्रिलोचन महापात्र, सचिव, कृषि अनुसंधान एवं शिक्षा, भारत सरकार तथा महानिदेशक, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली सहित अनेक गणमान्य अतिथियों ने संम्बोधित किया था। इस बैठक में अन्य बातों के अतिरिक्त एक सर्वमान्य विचार यह उभरकर आया कि यदि किसानों की आय बढ़ानी है, तो खेती की अन्य विधाओं के साथ बागवानी और पशुपालन पर जोर दिया जाना आवश्यक है।

अतः इस बैठक की कार्यवाही में यह मुद्दा सम्मिलित किया गया कि राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों के लिए हिन्दी में बागवानी से संबंधित तकनीकों पर एक साहित्य तैयार करने के लिए एक परिचर्चा आयोजित की जाय जिसमें राज्य के कृषि विश्वविद्यालयों एवं परिषद् के संस्थानों एवं अटारी, जोधपुर को सम्मिलित किया जाये। यह बैठक श्री कैलाश चौधरी, मा. कृषि राज्य मंत्री के निर्देशानुसार दिनांक 15 अक्टूबर, 2019 को आयोजित की गई जिसमें सभी संस्थाओं की उन्नत बागवानी तकनीकियों को सम्मिलित करते हुए एक पुस्तिका तैयार करने का निर्णय लिया गया।

आशा है कि यह पुस्तिका **''राजस्थान में शुष्क बागवानी की उन्नत तकनीकियां''** किसानों के लिए लाभदायक सिद्ध होगी। इस पुस्तिका को तैयार करने में श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर के माननीय कुलपति डॉ. जे.एस. संधू, स्वामी केशवानंद राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय के निदेशक प्रसार डॉ. एस. के. शर्मा, जोधपुर कृषि विश्वविद्यालय के डॉ. एस. आर. कुमावत, अटारी, जोधपुर के निदेशक डॉ. एस. के. सिंह, काजरी, जोधपुर के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. प्रदीप कुमार एवं राष्ट्रीय बीजीय मसाला अनुसंधान केन्द्र, अजमेर के प्रधान वैज्ञानिक डॉ. एस. एन. सक्सेना सहित केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर के अनेक सदस्यों का सहयोग प्राप्त हुआ है।

मैं सभी के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ।

दिनांक : अगस्त 2020

(पी. एल. सरोज)

भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान

बीकानेर

प्रौद्योगिकी-01: बेर उत्पादन की उन्नत तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायुः गर्म शुष्क सिंचित जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों में बेर का उत्पादन सफलतापूर्वक किया जा सकता है, क्योंकि बेर के वृक्षों का विकास शुष्क क्षेत्र की जलवायु के अनुरूप है। बेर वृक्षों की वृद्धि, फूल आना व फलन मानसून के समय होता है एवं उसी समय वृक्षों को पानी की आवश्यकता भी अधिक होती है। इस आवश्यकता की पूर्ति बरसात के पानी से हो जाती है। इसी प्रकार बेर के फलों को पकने व मिठास वृद्धि के लिए कम तापमान की आवश्यकता होती है। गर्म शुष्क क्षेत्रों में बेर के फल दिसम्बर माह से फरवरी तक पकते हैं, उस समय तापमान सामान्यतया कम रहता है, जो फलों के पकने और मिठास संचित होने के लिए उपयुक्त है। इन सभी जलवायु परिस्थितियों को देखते हुए राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों में बेर का बगीचा सफलतापूर्वक विकसित किया जा सकता है। यहाँ यह भी उल्लेख करना आवश्यक है कि बेर उगाने की प्रचलित विधि की मुख्य समस्या बेर के बड़े पौधों से फलों को तोड़ना है, क्योंकि बेर का पौधा कांटेदार होता है। इसके अतिरिक्त, बेर में अधिक फलत के कारण गुणवक्तायुक्त फल नहीं मिलते हैं, जिससे बाजार में कम कीमत मिलती है। संस्तुत विधि में बेर के पौधों को एक उचित आकार दिया जाता है जिससे फलों को तोड़ने में परेशानी भी नहीं होती है और गुणवक्तायुक्त फल प्राप्त होते हैं।

प्रौद्योगिकी विवरण, विशेषतायें एवं लाभ

बेर का बगीचा विकसित करने के लिए सबसे पहले उपयुक्त किस्म का चुनाव आवश्यक होता है। उसके लिए किसान कुछ अगेती, कुछ मध्यम और कुछ पिछेती पकने वाली किस्मों का चुनाव करें। संस्थान ने शोध में पाया है कि बेर की थार सेविका व गोला अगेती पकने वाली किस्में हैं। सेव मध्य तथा गोमा कीर्ति व उमरान पिछेती किस्में हैं। अतः आवश्यकता व जलवायु अनुसार किस्मों का चयन किया जाना चाहिए। पौध लगाने की तैयारी से पहले निर्धारित दूरी पर 2 × 2 × 2 फिट आकार के गड्ढ़े बनाकर उसमें समानुपात में मिट्टी, वर्मीकम्पोस्ट व चिकनी मिट्टी का मिश्रण बनाकर भर दें। सामान्यतः बेर के पौधों का रोपण 6–8 मीटर की दूरी पर किया जाता है। इस उच्च तकनीक में 6 × 3 मीटर की दूरी पर पौधे लगाये जाते हैं।

बेर का बगीचा लगाने का सही समय जुलाई–अगस्त माह होता है। इसके लिए गड्ढों की खुदाई व भराई जून माह तक पूरी कर लेनी चाहिए। जुलाई–अगस्त माह में उपयुक्त प्रजाति के कलिकायन द्वारा तैयार पौधे पहले से तैयार गड्ढ़ों में रोपित कर दें। बेर में सामान्यतया जुलाई से अक्टूबर माह के मध्य में यदि बरसात की मात्रा व वितरण सामान्य है तो अलग से सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है।

नवम्बर–दिसम्बर माह में 3–4 दिनों के अंतराल पर बूंद–बूंद प्रणाली से सिंचाई फलों के विकास व पकने के लिए आवश्यक है। बेर की फसल से अच्छी गुणवत्तायुक्त पैदावार प्राप्त करने के लिए निम्नानुसार पौधे के चारों ओर खाई बनाकर देशी खाद, फॉस्फोरस और पोटाश उर्वरकों की सम्पूर्ण मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा को जून के अंतिम सप्ताह में दें तथा नत्रजन की बची हुई आधी मात्रा को सितम्बर माह में सिंचाई के साथ देवें।

वर्ष	लीटर प्रतिमाह प्रतिपौधा			मात्रा प्रतिवर्ष/प्रतिपौधा			
	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर	देशी खाद (किग्रा)	नत्रजन (ग्राम)	फॉस्फोरस (ग्राम)	पोटाश (ग्राम)
1–3	100	100	80	8	75	40	25
4–5	200	200	500	25	250	125	75
5 से अधिक	300	300	200	40	400	250	150

उत्पाद की मूल्य प्रतिस्पर्धा को देखते हुए अच्छी गुणवत्ता के फल पैदा करना समय की आवश्यकता है। सामान्य रूप से बेर की खेती से अच्छी गुणवत्ता के फल नहीं मिल पाते हैं तथा उनकी तुड़ाई में भी बहुत परेशानी आती है। इसके लिए यदि बेर के पौधों की सधाई करते हुए निश्चित फ्रेम पर नियंत्रित करते हैं तो, अधिक व अच्छी गुणवत्ता के फल उपज मिल सकती है। संस्थान ने बेर के बगीचों को 'वाई', 'टेलीफोन' एवं स्पेलियर आकारों पर विभिन्न प्रजातियों को नियंत्रित किया है। पिछले तीन वर्षों के परिणाम बताते हैं कि अलग–अलग किस्म अलग–अलग आकारों की सधाई पर अपना प्रभाव अलग–अलग दिखाती है, जैसे– गोला व थार सेविका प्रजातियां की अच्छी गुणवत्ता और अधिक उपज 'वाई' आकार पर मिली, वहीं थाई बेर व गोमा कीर्ति किस्मों को अच्छी गुणवत्ता और अधिक उपज 'स्पेलियर' आकार पर सधाई कर नियंत्रित करने पर प्राप्त हुई। उच्च तकनीकों के अनुसार पौधों को साध कर नियंत्रित करने से पौधों को हवा व धूप समान रूप से मिलती रहती है जिससे उसका स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है। इस तकनीक की सबसे अच्छी बात यह है कि इसमें फल तुड़ाई सरलता से हो जाती है जिससे श्रम की बचत भी होती है।

बेर की सामान्य रूप से की गयी खेती से कुल उपज 12–15 टन प्रति हेक्टेयर प्राप्त होती है, जिसका बाजार मूल्य लगभग रू. 80000 से 100000/–लाख तक प्राप्त हो सकता है। जबकि कुल लागत

सधाई की वाई आकार (1), स्पेलियर (2) और टेलीफोन (3) तकनीक

रू. 20000/— से 25000/— आती है। इस प्रकार बेर फसल से प्रति हेक्टेयर शुद्ध लाभ रू. 60000/— से 75000/— के लगभग प्राप्त हो पाता है। बेर के पौधों को यदि उचित फ्रेम पर नियंत्रित किया जाए तो एक हेक्टेयर क्षेत्र से 18—20 टन उपज प्राप्त हो सकती है, जिसकी बाजार विनिमय दर रू. 125000/— से 150000/— तक हो सकती है। इसकी लागत एक हेक्टेयर क्षेत्र में रू. 30000/— से 35000/— तक आती है और इस प्रकार प्रति हेक्टेयर शुद्ध लाभ रू. 95000/— से 115000/— तक मिलती है। इस प्रकार किसान उच्च तकनीकी से बेर की खेती करते हैं तो उनकी आय में सामान्य तकनीक से की गयी खेती की तुलना में ज्यादा हो सकती है। उच्च तकनीक से बेर की खेती करने से फलों के निर्यात की भी संभावना है क्योंकि उनमें रोग व कीड़े का प्रकोप कम होता है और फलों की गुणवत्ता भी अच्छी होती है।

सावधानियाँ

- प्रारम्भिक तीन वर्षों में आकृतियों के अनुसार सधाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए।
- विभिन्न प्रकार के लोहे की आकृतियॉ स्थापित करने के लिए प्रथम वर्ष में लगभग एक लाख रूपये/हे. लग जाता है जिसकी वसूली पहली फलत में ही हो जाती है।

प्रौद्योगिकी-02 : किन्नौं की लाभदायक खेती के लिए समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क सिंचित क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

गर्म शुष्क जलवायु क्षेत्रों की मृदाएं मुख्यतः बलुई किस्म की है एवं इसकी उर्वरता व जलधारण क्षमता निम्न स्तर की होती है, अतः फलदार फसलों की खेती करना बहुत ही कठिन कार्य है। लेकिन इन क्षेत्रों में मौसम में उष्णता कम होती है एवं धूप अधिक तेज होती है। इस कारण से फसलों में कीट व व्याधियों का प्रकोप कम होता है और फलोपज की गुणवत्ता (रंग व मीठापन) दूसरे क्षेत्रों के मुकाबले अच्छी होती है। पश्चिमी राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों में इंदिरा गांधी नहर से खेती के लिए सिंचाई जल की आपूर्ति होती है। इसकी खेती के लिए जल में लवणता ईसी. <1.0 डेसी साइमन/मीटर होनी चाहिये। इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन के द्वारा किन्नों की लाभदायक खेती का प्रयास संस्थान में किया गया है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषतायें एवं लाभ

शुष्क क्षेत्रों में समन्वित पोषक तत्वों के प्रबंधन प्रौद्योगिकी से किन्नौं के कलमी पौधों को 6 × 6 मीटर की दूरी पर बलुई मृदा में, प्रति हेक्टेयर क्षेत्र में 270 पौधे लगाए जाते है। इन पौधों में उनकी आयु के अनुसार पोषक तत्व डाले जाते हैं, जिसका विवरण इस प्रकार है:

पोषक पदार्थ	आयु			
	01 वर्ष	03 वर्ष	05 वर्ष	08 वर्ष
देशी खाद (किग्रा/पौधा)	5	15	25	40
यूरिया (ग्रा/पौधा)	150	450	750	1200
डी.ए.पी. (ग्रा/पौधा)	150	450	750	1200
म्यूरेट ऑफ पोटाश (ग्रा/पौधा)	100	300	500	800
जिंक सल्फेट (ग्रा/पौधा)	25	25	50	75
एजोटोबैक्टर पीएस बीजीवाणु खाद (ग्रा/पौधा)	50	150	250	250

उपरोक्त दर से फरवरी माह में पौधे के तने से 50–150 सेमी की दूरी पर पौधे की उम्र के अनुसार घेरा बनाकर 20–30 सेमी गहरी खाई जिसकी चौड़ाई 25–30 सेमी हो, खोदकर देशी खाद, यूरिया की आधी मात्रा, डीएपी, म्यूरेट ऑफ पोटाश, जिंक सल्फेमट व जीवाणु खाद की पूरी मात्रा खाई में डालकर तुरंत ही उस पर मिट्टी से ढक दें अन्यथा खाद व उर्वरक से नत्रजन की मात्रा विलुप्त हो जाती है। इसके बाद सिंचाई कर दें। इस क्रिया के बाद प्रति सप्ताह पौधे की सिंचाई करें। मार्च माह में जब फसल

शुष्क क्षेत्रों में समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन का प्रक्षेत्र परिदृश्य एवं किन्नौं फल

पर फूल आने लगे तब 15–25 दिन के लिए सिर्फ हल्की सिंचाई करें। अप्रैल माह के बाद प्रति सप्ताह सिंचाई अवश्य करें। सितम्बर माह में यूरिया की शेष आधी मात्रा को सिंचाई जल के साथ दें। किन्नौं की फसल तीन वर्ष बाद फलत में आने लगती है। दिसम्बर से जनवरी माह में किन्नौं के फलों का रंग नारंगी होने लगता हैं जो इसके पकने का संकेत होता है। फलों की तुड़ाई सावधानी पूर्वक करनी चाहिए ताकी फलों को कोई क्षति न पहुंचे।

राजस्थाान के सिंचित गर्म शुष्क क्षेत्रों में समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन से किन्नौं की खेती में फल का गहरा नारंगी रंग, फल में रस मात्रा की अधिकता (56 प्रतिशत), अधिक मीठापन (12.6 डि.ब्रि.), पतला व आसानी से छिलने वाला छिलका, कम बीज संख्या (3–4 बीज/फल) तथा अधिक उपज (20–23 टन/हेक्टेयर) इसकी मुख्य विशेषताएं हैं। गर्म शुष्क क्षेत्रों में साधारणत कीट व व्याधिनाशी की भी फसल में डालने की आवश्यवकता नहीं रहती है। इस फसल को पाले एवं ठंडे मौसम से भी नुकसान नहीं होता है। इस तकनीक से किन्नौं के बगीचे में लाभदायक जीवाणुओं की संख्या अधिक बन जाती है जो खाद एवं उर्वरकों के उपयोग को बढ़ातें हैं। लंबे समय के उपरांत मृदा की उर्वरता भी बढ़ जाती है। राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों में समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन से किन्नौं की खेती से लाभ व लागत 2.57:1 आता है, जो अन्य फल फसलों की अपेक्षा अधिक है। समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन से मृदा की उर्वरता पर भी अच्छा प्रभाव पड़ता है तथा सिंचाई जल धारण की क्षमता भी बढ़ती है।

सावधानियाँ

खाद व उर्वरकों की आवश्यक मात्रा को पौधे के चारों ओर खाई में ही देवें। खाद व उर्वरकों को फरवरी के पहले पखवाड़े में ही डालें। संस्तुत की गई खाद व उर्वरक ही फसल में डालें।

प्रौद्योगिकी-03 : मौसम्बी उत्पादन तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म एवं शुष्क सिंचित जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

शुष्क क्षेत्रों में मौसम्बी उत्पादन प्रौद्योगिकी किसानों को पारंपरिक खेती में विविधता लाने के साथ पोषण सुरक्षा और आय बढाने में सहायक है। गर्म शुष्क क्षेत्र में पर्याप्त धूप, कम आर्द्रता, कीटों और बीमारियों के कम घटनाओं, उच्च और स्थिर मांग, आकर्षक कीमतें, टिकाऊ उत्पादन के कारण मौसम्बी उत्पादन बहुत लाभदायक सिद्ध हो रहा है। मौसम्बी के परिपक्व बगीचे से 12–16 टन प्रति हेक्टेयर हिसाब से उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रौद्योगिकी से गर्म एवं शुष्क जलवायु क्षेत्र में लगभग 2.00 से 2.25 लाख प्रति हेक्टेयर शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

मौसम्बी की खेती के लिए अर्द्ध–शुष्क जलवायु अच्छी रहती है। इसकी खेती के लिए 10–35^{o} सेल्शियस तापमान अच्छा होता है। मौसम्बी लवणता के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है इसके खेती के लिए जल की लवणता कम (ईसी <1.0 डेसी साइमन/मीटर) तथा मिट्टी का पीएच मान 6.5 से 7.5 तक होना चाहिए। मौसम्बी की खेती विभिन्न प्रकार की मिट्टी, जैसे बलुई–दोमट, दोमट और चिकनी–दोमट मिट्टी में की जा सकती है, लेकिन जल निकासी प्रयाप्त होनी चाहिए। मौसम्बी की प्रमुख किस्में वाशींगटन नॅव्हेल, जाफा, सतगुडी, मौसम्बी, वेलेन्शीया, न्यूसेलर एवं ब्लड रेड है, लेकिन शुष्क क्षेत्र में सतगुडी और मौसम्बी किस्में उपयुक्त पाई गई है। मौसम्बी की खेती में मूलवृंत का बहुत महत्व है। यह पौधों में कई अच्छे गुणों का सुधार करता है जैसे फल गुणवत्ता, उच्च उत्पादकता, कीट और रोग के विरुद्ध प्रतिरोधकता तथा विभिन्न वातावरण में अनुकुलनता इत्यादी। मौसम्बी का प्रवर्धन टी बडिंग द्वारा किया जाता है। मौसम्बी के साइन (कलिका) को रफ लेमन (जट्टी खट्टी) और पेक्टिनिफेरा मूल्वर्न्त पर टी बडिंग द्वारा प्रत्यारोपित किया जाता है।

गर्म शुष्क क्षेत्रों में पौधारोपण के लिए 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढे खोदेने चाहिए। वर्गाकार विधि से कलमी पौधों को 6×6 मीटर की दूरी लगाना चाहिये, इस विधि से 275 पौधे प्रति हेक्टेयर लगाए जाते है। मौसम्बी की खेती के लिए पौधारोपण बरसात के मौसम में अगस्त से अक्टूबर अथवा फरवरी से मार्च में करना चाहिए। पौधारोपण के समय मिट्टी में आवश्यकतानुसार खाद व उर्वरक का प्रयोग करें, और

रोपण के बाद हल्की सिंचाई अवश्य करें। मौसम्बी के 5 वर्ष के पौधे को 30 किलो की गोबर कि खाद, 1 किलो नीम खाद, नाइट्रोजन 450 ग्राम, फास्फोरस 200 ग्राम पोटाश 200 ग्राम प्रतिवर्ष देना चाहिए। इसके अतिरीक्त सुक्ष्म पोषक तत्वों (जिंक 0.5, आयरन 0.2, मैग्नीशियम 0.5, बोरोन 0.1 और मोलिब्डेनम 0.003%) का वर्ष में एक बार पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। बून्द बून्द सिंचाई पद्धति मौसम्बी की खेती लिए बहुत ही उपयुक्त है इससे पानी की बचत (50–60%) के साथ उत्पादन भी अधिक (20–30%) होता है।

बून्द बून्द सिंचाई पद्धति से खरपतवार नियंत्रण, उर्वरक तथा पेस्टिसाइड्स के उपयोग की दक्षता बहुत बढ़ जाती है। बून्द बून्द सिंचाई पद्धति से गर्मियों में सप्ताह में दो–तीन बार तथा सर्दियों में एक बार पानी देना चाहिए। मार्च माह में जब फसल पर फूल आने लगे तब हल्की सिंचाई करनी चाहिए। मौसम्बी में साइट्रस बटर फ्लाई, साइट्रस सिल्ला, केंकर एवं सिट्रस डाई बैक प्रमुख कीट एवं रोग है। साइट्रस बटर फ्लाई की रोकथाम के लिए नीम आयल का 0.3 प्रतिशत पानी में मिलाकर स्प्रे करें। बगीचे में लाइट ट्रैप या फूड ल्यूर (10–12 प्रति हेक्टेयर) लगाकर कीटों को आकर्षित कर नष्ट किया जाता है। साइट्रस सिल्ला की रोकथाम के लिए थायामेथोजैम (25 डब्लू जी) 0.4 ग्राम प्रतिलीटर पानी में मिलाकर या इमीडाक्लोप्रिड (17.8 एसएल) 0.5 मि. ली. को प्रतिलीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें। केंकर से प्रभावित बागों में से प्रभावित टहनियों, फलों और पत्तियों को निकालकर नष्ट कर दें और प्रभावित भागों पर 10 प्रतिशत बोर्डो पेस्ट का लेप करें। इसकी रोकथाम के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 18 ग्राम और स्ट्रैप्टोसाइक्लिन 6 ग्राम को 10 लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें और अधिक संक्रमण होने पर 30 दिनों के बाद दोबारा स्प्रे करें। सिट्रस डाई बैक की रोकथाम के लिए सुखी हुई टहनियों एवं अन्य भागों को हटाकर 1% बोर्डो मिश्रण या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2.5 ग्राम प्रति लीटर छिड़काव करें। मौसम्बी की फसल तीन वर्ष बाद फलन में आने लगती है। अक्टूबर व नवम्बर माह में मौसम्बी के फल पकने लगते है। पके फल उचित आकार, हरे पीले तथा गूदा हल्के पीले रंग है और टी. एस. एस अम्लता का अनुपात 25–30 होता है।

सावधानियां

फलों की तुड़ाई सावधानी पूर्वक सिकेटीयर या कैंची से करना आवश्यक है ताकी टहनियों और फलों को कोई क्षति न पहुंचे। सभी रसायनों का सावधानी से अनुशंसित मात्रा में ही उपयोग करना चाहिए तथा उपयोग के तुरंत बाद फल नहीं तोड़ने चाहिए। मौसम्बी में ज्यादा पानी नहीं देना चाहिए, क्योंकि इससे जड़ गलन व तना गलन आदि रोग लगते हैं। फलों की दिखावट और बढियां गुणवत्ता के अनुसार ग्रेडिंग कर सी. एफ. बी. (कोरोगेटेड फाइबर बॉक्स) डिब्बों में पैक करना चाहिए। फलों को 7–8^{o} सेल्सियस तापमान और 85–90 प्रतिशत आपेक्षित आद्रता पर 4–8 सप्ताह तक भंडारण किया जा सकता है।

प्रौद्योगिकी - 04 : खजूर उत्पादन की उन्नत तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क सिंचित जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्व

देश के गर्म शुष्क सिंचित क्षेत्रों में खजूर की फसल को सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। खजूर के फल उच्च पोषकतायुक्त, कार्बोहाईड्रेट, खनिज व विटामिन से भरपुर होते हैं। खजूर की खेती बलुई व अच्छी जल निकासी वाली मृदा में, जहां पर वर्षा जुलाई अथवा इसके बाद होती हो, आसानी से की जा सकती है। राजस्थान के पश्चिमी भू–भाग में मृदा बलुई तथा वर्षा जुलाई के मध्य से ही सामान्यतः शुरू होती है। इस क्षेत्र में भूमिगत जल जिसकी गुणवत्ता दूसरी फसलों के योग्य नहीं है, ऐसे जल को खजूर की फसल के लिए प्रयोग में लिया जा सकता है, क्योंकि खजूर की फसल में लवणीय व क्षारीय दोनों प्रकार के जल को सहन करने की क्षमता अधिक होती है। इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए राजस्थान के बीकानेर, बाड़मेर, जैसलमेर, जोधपुर, पाली, सिरोही, जालौर, चूरू, सीकर, आदि जिलों में खजूर की खेती की विपुल संभावनाएं हैं।

प्रौद्योगिकी विवरण, विशेषतायें एवं लाभ

खजूर के नये बगीचे लगाने के लिए सामान्यतः ऊतक संवर्धित व संकर द्वारा तैयार पौधों का प्रयोग किया जा रहा है। खजूर का बगीचा बीजू पौधों के द्वारा नहीं लगाना चाहिये क्योंकि इसमें नर व मादा पौधे अलग–अलग होते हैं और फलों की गुणवत्ता भी अच्छी नहीं होती है। ऊतक संवर्धित व संकर उत्पादित पौधों की नर/मादा व गुणवत्ता उसी प्रकार की होगी जैसा कि मातृ पौधे के गुण होंगे। खजूर का बगीचा लगाने में किसानों को किस्म, सिंचाई जल की उपलब्धता, वर्षा अंतराल की जानकारी होना अति आवश्यक है। सामान्यतया राजस्थान के पश्चिमी भाग में हलावी, मेडजूल, बरही, खलास, जाहिदी, सगाई, आदि किस्मों के मादा पौधे लगाने चाहिए। वहीं पर उचित परागण हेतु 8 से 10 प्रतिशत पौधे धनामी एवं एल–इन–सिटी (मदसारी) आदि किस्मों के नर पौधे बगीचे में अवश्य लगाए जाने चाहिए। खजूर का बगीचा लगाने के लिए 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढ़े 8×8 मीटर की दूरी पर बनाकर उसमें मिट्टी, देशी खाद व चिकनी मिट्टी को समानुपातः (1:1:1) में जून माह में भर दें। तैयार गड्ढ़ों में उचित किस्मों के नर व मादा पौधों को उचित अनुपात में लगाएं। नर पौधों को खेत की बाड़ के ओर लगाना चाहिए। आरंभ के तीन–चार वर्षों तक जब तक कि पौधे फल नहीं देते हैं, तब तक पोषक तत्वों को देने के लिए देशी खाद, फॉस्फोरस, पोटाश की पूरी मात्रा व नत्रजन की आधी मात्रा को पौधे के चारों तरफ

एक फिट गहरी व चौड़ी खाई बनाकर अक्टूबर–नवम्बर माह में देवें तथा शेष नत्रजन की आधी मात्रा मार्च–अप्रैल माह में देवें।

वर्ष	मात्रा प्रतिवर्ष / प्रतिपौधा			
देशी खाद (किग्रा)		नत्रजन (ग्राम)	फॉस्फोरस (ग्राम)	पोटाश (ग्राम)
1	10	100	50	50
2	20	200	100	100
3	30	300	150	150

पौधा जब फलन में आये तो देशी खाद एवं फॉस्फोरस, पोटाश की पूरी मात्रा व नत्रजन की आधी मात्रा को मानसून की समाप्ति के बाद (अक्टूबर–नवम्बर) में पौधे के तने से 75–100 सेमी की दूरी पर खाई बनाकर देवें तथा शेष नत्रजन को अप्रैल माह में जब फलों का विकास हो रहा हो, तब हल्की सिंचाई के बाद पौधे के थालों में दें।

वर्ष	मात्रा प्रतिवर्ष / प्रतिपौधा			
	देशी खाद (किग्रा)	नत्रजन (ग्राम)	फॉस्फोरस (ग्राम)	पोटाश (ग्राम)
4	40	500	200	200
5	50	500	200	200
8	75	1200	500	800
10 वर्ष एवं उससे ऊपर	100	1500	650	1000

खजूर के पौधे की जल आवश्यकता अधिक होती है। अतः उपलब्ध जल का सदुपयोग करने के लिए बूंद–बूंद सिंचाई प्रणाली को अपनाते हुए निम्नानुसार सिंचाई करें :

वर्ष	लीटर प्रति माह प्रति पौधा											
	जन.	फर.	मार्च	अप्रेल	मई	जून	जुलाई	अग.	सित.	अक्टू.	नवं.	दिस.
1 वर्ष तक	150	200	250	300	400	400	400	300	300	300	250	250
1–3	250	300	350	400	500	500	500	400	400	400	300	300
3–5	300	300	400	500	600	600	600	500	400	400	400	400
5–8	300	300	400	600	600	600	600	600	400	400	400	300
8 से अधिक	400	300	500	650	700	700	600	600	500	400	400	400

सिंचाई जल को बूंद–बूंद पद्धति के द्वारा प्रति पौधा 8 लीटर / ड्रिपर के 4 ड्रिपर के द्वारा एक दिन के अंतराल पर देवें। सूखी एवं रोगग्रस्त पत्तियों को समय–समय पर हटा देना चाहिए। सामान्यतया उचित फलन लेने के लिए प्रति पौधा 50–75 की संख्या में पत्तियां होनी चाहिए। सामान्य तौर पर नर पौधे में

मादा पौधे की तुलना में 15 से 25 दिन पहले फूल आते हैं। अतः नर के फूल के परागण को एकत्रित करके 4 डिग्री सें. तापमान पर संरक्षित कर लें। जब मादा पौधों पर फूल खिलने लगें तब नर परागण 1:10 के अनुपात में टेलकम पाऊडर के साथ मिलाकर रूई के फोहे से चिपकाकर मादा पौधे के फूल में रख देने से परागण हो जाता है। जब फल मटर के दाने के बराबर हो जाए तो सिंचाई का विशेष ध्यान रखें जिससे फल का विकास अच्छा होगा। इस प्रकार से जब फल हरे रंग से पीले/लाल (प्रजाति अनुसार) हो जाए तो उसे 'डोका' अवस्था कहा जाता है। हलावी, बरही एवं खलास प्रजातियों के फल इस अवस्था में खाने योग्य होते हैं। उसके बाद यदि बरसात जुलाई तक नहीं होती है तो डोका फल हल्के बादामी रंग के होकर मुलायम हो जाते हैं। इसे 'पिण्ड' अवस्था कहते हैं। इस अवस्था पर सभी प्रजातियों के फल खाने योग्य होते हैं। मेडजूल प्रजाति के डोका अवस्था के फलों से छुआरा बनाया जाता है, जिसका बाजार भाव भी अधिक होता है तथा उसे अधिक समय (4–6 माह) तक रखा भी जा सकता है। सामान्यतः एक स्वस्थ खजूर के एक वृक्ष से 60–80 किग्रा फल उपज (10–12 टन/हेक्टेयर) प्राप्त की जा सकती है। बाजार भाव के अनुसार रू. 1.75–2.00 लाख/हेक्टेयर आय प्राप्त की जा सकती है। खजूर के एक हे. क्षेत्र से कुल लागत (सिंचाई, खाद, उर्वरक, कीटनाशक, श्रमिक, आदि) रू. 0.60–0.75 लाख आती है। इस प्रकार एक हे. से रू. 1.15–1.25 लाख शुद्ध लाभ मिल सकता है।

सावधानियाँ

- खजूर के बाग में 8–10 प्रतिशत नर पौधे लगाना आवश्यक होता है।
- ऊतक संवर्धन विधि द्वारा तैयार पौधों का रोपण करने से बगीचे की एकरूपता बनी रहती है।

प्रौद्योगिकी-05 : अनार उत्पादन की उन्नत तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म-शुष्क जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्व

शुष्क क्षेत्रों में अनार (*पुनिका ग्रेनेटम*) उत्पादन प्रौद्योगिकी, अनार में गुणवत्ता उत्पादन के लिये बहुत महत्त्वपूर्ण है। अनार का बाग लगाने के लिए 6.5 से 7.5 पी.एच. मान वाली गहरी बलुई–दोमट मिट्‌टी उपयुक्त होती है। इसके पौधों में लवण एवं क्षारीयता सहने करने की क्षमता होती है। रेतीली मिट्‌टी में भी अनार से अच्छी उपज प्राप्त होती हैं। गर्म–शुष्क व अर्ध–शुष्क जलवायु अनार उत्पादन के लिए बहुत ही उपयुक्त होती है। पौधों में सूखा सहन करने की अत्यधिक क्षमता होती है परन्तु फल विकास के समय नमी को होना अतिआवश्यक है। अनार स्वास्थ्य के बहुत ही लाभदायक फल है। यह पोषक तत्वों, एंटी ऑक्सिडेंट्स तथा विटामिन से भरपूर होता है। जो शुष्क क्षेत्रों में पोषक सुरक्षा में भी योगदान देता है। शुष्क क्षेत्रों में अनार (*पुनिका ग्रेनेटम*) उत्पादन प्रौद्योगिकी, पौधों को लगाने से लेकर विपणन तक गर्म शुष्क क्षेत्र के तहत अनार की खेती के विभिन्न पहलुओं को शामिल करती है। इसमें अनार की उन्नत किस्म भगवा को उचित दुरी पर लगाना, बहु तना पद्धति से सधाई, खाद एवं उर्वरक प्रबंधन, सिंचाई प्रबंधन, बहार नियमन, कीट एवं रोग प्रबंधन आदि शामिल है। इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर ने अनार की खेती में नई तकनीकी विकसित कर, इसकी खेती को लाभदायक बनाने का प्रयास किया गया है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

शुष्क क्षेत्रों में अनार की उन्नत किस्म जैसे भगवा को 4×3 मीटर दूरी पर लगाना, खेती बूंद–बूंद सिंचाई पद्धति पर करना, गर्मियों में बून्द बून्द सिंचाई पद्धति से सप्ताह में दो बार तथा सर्दियों में एक बार पानी देना, मृग बहार को नियमित करने के लिए पौधों को जून के महीने में सिंचाई बंद कर देना तथा एक महीने बाद पौधों पर 2 मिली. इथ्रेल तथा 5 ग्राम डी.ए.पी. प्रति लीटर की दर से पत्तियों पर छिड़काव करना, इसके बाद हल्की सिंचाई करके खाद डालना, आदि शुष्क क्षेत्रों में अनार (भगवा किस्म) उत्पादन की उन्नत प्रौद्योगिकी के प्रमुख बिंदु है। शुष्क क्षेत्र में अनार में माइट एवं फफूँद जनित पर्णीय एवं फल धब्बा मुख्य रोग है, जिनका उचित प्रबंधन बहुत आवश्यक है। माइट के प्रबन्धन के लिए सूखे

मौसम में प्रोपारजाईट (57 ई. सी.) का 1.5–2.0 मिली. प्रतिलीटर अथवा ऐस्पायरोमेसिफेन (240 एस.सी.) का 0.4–0.5 मिली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर बारी बारी से छिड़काव करें तथा नियमित सिंचाई करें। फफूँद जनित पर्णीय एवं फल धब्बा रोग में पत्तियों एवं फलों पर अनियमित आकार में छोटे भूरे, काले रंग के धब्बे बन जाते हैं जो बाद बड़े धब्बों में परिवर्तित हो जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए प्रभावित पत्तियों एवं फलों को तोड़कर कर नष्ट कर दें। रोग की प्रारम्भिक अवस्था में प्रोपीकीनाजोल (0.1%) तथा डाईफेनकोनाजोल (25 ई.सी.) 0.05% का 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें। अनार में फलों का फटना एक गंभीर समस्या है। यह विकार नए बगीचे में मृदा में बोरान की कमी के कारण तथा पुराने बगीचे में मृदा में नमी के असंतुलन के कारण होता है। इसके प्रबंधन के लिए नियमित रूप से सिचाई करें। जिब्रलिक अम्ल (जी.ए.3) 20 पी.पी.एम. एवं बोरान 0.2 प्रतिशत का पर्णीय छिड़काव करें। अनार नान–क्लाईमेट्रिक फल है जब फल पूर्ण रूप से पक जाये तभी पौधे से तोड़ना चाहिए। पौधों में फल लगने के 6 महीने बाद तुड़ाई के लिए तैयार हो जाते है और पके फल के दाने लाल हो जाते हैं। अनार के फलों के वजन, आकार एवं बाहरी रंग के आधार पर विभिन्न श्रेणियों विभाजित कर एवं अच्छी तरह पैकिंग कर बाजार में बेचना चाहिए। इस प्रौद्योगिकी से सिमित संसाधनों का दीर्घकालिक उपयोग करते हुए अच्छी गुणवत्ता युक्त ज्यादा उपज प्राप्त की जा सकती है। इस प्रौद्योगिकी से गर्म एवं शुष्क जलवायु क्षेत्र में लगभग 1.75 से 2.0 लाख प्रति हेक्टेयर शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

सावधानियाँ

- बूंद–बूंद सिंचाई पद्धति से गर्मियों में सप्ताह में दो बार तथा सर्दियों में एक बार पानी देना चाहिए।
- शुष्क क्षेत्रों में मृग बहार को नियमित के लिए पौधों को जून के महीने में सिंचाई बंद कर देते हैं तथा एक महीने बाद पौधों पर 2 मिली. इथ्रेल 5 ग्राम डी.ए.पी. प्रति लीटर की दर से पत्तियों पर छिड़काव के बाद हल्की सिंचाई करके खाद डालनी चाहिए।
- सभी रसायनों का सावधानी से अनुशंसित मात्रा में ही उपयोग करना चाहिए तथा उपयोग के तुरंत बाद फल नहीं तोड़ने चाहिए।
- शुष्क क्षेत्रों में अनार की अधिक उपज, उच्च गुणवत्ता और उन्नत प्रबंधन के लिए एक प्रभावी समग्र दृष्टिकोण को अपनाना चाहिये।

प्रौद्योगिकी-06 : बेल उत्पादन की उन्नत तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क सिंचित व अर्ध शुष्क जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्व

बेल पोषक तत्वों और औषधीय गुणों से भरपुर भारत के प्राचीन फलों में से एक है। बेल के गुणों का वर्णन यजुर्वेद, जैन साहित्य, उपवन विनोद, चरक संहिता और बृहत संहिता में विस्तृत रूप से मिलता है। बेल के पंचाग (जड, छाल, पत्ते, शाख एवं फल) औषधी के रूप में बहुत उपयोगी है। उत्तर भारत में बेल के फल का उपयोग गरमी के महीनों में बहुतायत से किया जाता है। बेल की विपरीत परिस्थितियों के प्रति सहनशीलता, पोषक तत्वों तथा औषधीय गुणों से भरपूर, विभिन्न प्रकार की खाद्य परिरक्षित पदार्थो के रूप में उपयोगिता तथा अधिक समय तक भण्डारण क्षमता, प्रति इकाई उच्च उत्पादकता तथा भारतीय जनता की औषधीय फलों के प्रति जागरूकता बेल को आने वाले समय में एक महत्त्वपूर्ण फल साबित हो सकता है। शुष्क व अर्धशुष्क आधारित क्षेत्रों में बेल की खेती को सफलता पूर्वक की जा सकती है।

बेल अत्याधिक सहनशील वृक्ष होने से किसी भी प्रकार की भूमि एवं जलवायु में उगाया जा सकता है। परंतु उपयुक्त जल निकास होने के कारण बुलई दोमट भूमि इसके लिए अधिक उपयुक्त होती है। ऊसर, बंजर कंकरीली, खादर एवं बीहड भूमि में भी इसकी खेती सफलता पूर्वक की जा सकती है। बेल की खेती के लिए 6–8 पी.एच. मान वाली भूमि अधिक उपयुक्त होती है। ऐसी भूमि जिसमें विनमयशील सोडियम (20–30 प्रतिशत) क्षारीयता (पी.एच.) मान 9 तथा विद्युत चालकता 6 डे.सा. प्रति मीटर तक हो, में बेल की व्यावसायिक खेती की जा सकती है। यह एक उपोष्ण जलवायु का पौधा है परन्तु उष्ण जलवायु में भी इसको सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। बेल की बागवानी समुद्र तल से 1200–1600 मीटर उँचाई तक और 7–46° से. तापमान तक सफलतापूर्वक हो सकती है। बेल के ज्यादातर पेड़ों में कांटे पाये जाते हैं। गर्मी (अप्रैल) के समय में पत्तियां गिर जाती हैं। पौधों में शुष्क जलवायु को सहन करने की क्षमता बढ़ जाती है। जिस भूमि में पानी इकठ्ठा होता है वहाँ पर इसकी खेती में समस्या आती है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

कृषि विश्वविद्यालयों एवं भा.कृ.अनु.प. के अनुसंधान संस्थानों ने बेल की विभिन्न प्रजातियाँ जैसे– एन.बी–5, एनबी–7, एनबी–9, एनबी–16, एनबी–17, पंत शिवानी, पंत उर्वशी, पंत अपर्णा, पंत सुजाता, सी.आई.एस.एच.–बेल–1, सी.आई.एस.एच.–बेल –2 गोमायशी और थार दिव्या विकसित की हैं। अच्छे मूलवृंत प्राप्ति के लिए बेल के पौधे मुख्य रूप से बीज से तैयार किये जाते हैं। बेल की खेती हेतु पौधे चश्मा (पैच) विधि से तैयार करना चाहिए। चश्मा की विभिन्न पद्धतियों में पैबन्दी चश्मा विधि (पैच) द्वारा मई–जून में पौधे तैयार करने से 80–90 प्रतिशत सफलता प्राप्त की जा सकती है। पॉली एवं नेट हाउस की सहायता से कोमल शाख बंधन तकनीकी द्वारा बेल का प्रर्वधन साल के अन्य महीनों में भी किया जा सकता है। स्वस्थाने पैच कलिकायन मई–जून में करने से 95 प्रतिशत से अधिक सफलता प्राप्त की जा

सकती है। मई में कलिकायन करने से 8–12 दिन के अन्दर कलिका में वृद्धि होना शुरू हो जाती है।

पौधे लगाने के एक माह पूर्व 6–8 मीटर के अंतर पर 75 से 100 घन सेमी. के गड्ढ़े तैयार कर लेते हैं। ऐसे गड्ढ़ों को 20–30 दिनों तक खुला छोड़ कर 20–25 किग्रा. गोबर की सड़ी खाद ऊपरी व चिकनी मिट्टी डालकर मिलाना चाहिए। पौध रोपण जुलाई–अगस्त माह में करनी चाहिए। यदि क्षार की मात्रा अधिक हो तो 100–200 ग्राम जिप्सम तथा दीमक से बचाव के लिए क्लोरोपाइरीफास की डैन्चिंग करना चाहिए। बारानी खेती के लिए जैविक पलवार पौधे के तने पेड़ की चारों तरफ 4 वर्ग मीटर में 20 सेमी. मोटी पलवार वर्षा के बाद (अक्टूबर) में करने से बेसीन की मिट्टी में केचुआं और सुक्ष्मजीवों की मात्रा बढ़ जाती है तथा भूमि की नमी बरकरार रहती है तथा तापमान भी कम रहता है। इससे भूमि के भौतिक तथा रासायनिक गुणों में भी सुधार हो सकता है।

पौधों को निश्चित रूप से 5 किग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 50 ग्राम नत्रजन, 25 ग्राम फॉस्फोरस एवं 50 ग्राम पोटास की मात्रा को प्रतिवर्ष डालने से अच्छी बढ़वार एवं फलन होता है। इस मात्रा को 10 वर्षों तक गुणित अनुपात में बढ़ाते रहना चाहिए। बेल के नये पौधों को स्थापित करने के बाद सिंचाई की आवश्यकता रहती है। गर्मी के महीनों में बेल का पेड़ पत्तियां गिरा देता है और सुसुप्त अवस्था में चला जाता है। मई–जून तक नई पत्तियां तथा फूल आना शुरू हो जाते हैं। फूल आने के समय सिंचाई नहीं करना चाहिए इससे उत्पादन पर प्रतिकूल असर पडता है। पौधों की सधाई, उन्नचत प्ररोह विधि से करना उत्तम होता है। सधाई का कार्य शुरू के 2–4 वर्षो में ही करना चाहिए। मुख्य तने को 75 सेमी

तक अकेला रखना चाहिए। बाद में 4–6 मुख्य शाखाओं को चारों दिशाओं में बढ़ने देना चाहिए। बेल के पौधों में आवश्यकतानुसार सधाई–छंटाई करने से उत्पादन तथा फलों की गुणवत्ता पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। बेल में सामान्यतः रोग और कीट बहुत कम नुकसान पहुंचा पाते हैं। इसमें बेल कैंकर, आन्तरिक विगलन, पत्तियों पर काला धब्बा और फलों का गिरना सामान्यतः पाया जाता है। इनके नियंत्रण के लिए उचित दवाई का छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर करना चाहिए। कीट में सामान्यतः पर्णभक्षी थोड़ा हानि पहुँचातें हैं। इन कीटों की रोकथाम हेतु रोगर (0–5 प्रतिशत) या थायोडॉन (0–7 प्रतिशत) का छिड़काव सप्ताह में एक बार करना चहिए।

बेल के फल फरवरी माह के अंत से तोड़ने योग्य हो जाते हैं। जब फलों का रंग गहरे हरे रंग से बदल कर पीला हरा होने लगे तब डंठल के साथ फलों को तोड़ना चाहिए। कलमी पौधों में 2–3 वर्षो में फलन आ जाता है। फलों की संख्या पौधे की बढ़वार के अनुसार बढ़ती जाती है। शुष्क क्षेत्र में 09–10 वर्ष के पौधे से 80–150 किग्रा. तक फल प्राप्त किये जा सकते हैं। वैज्ञानिक परीक्षण और मुल्यांकन से यह निष्कर्ष निकला है कि बारानी (वर्षा आधारित) शुष्क क्षेत्रों में बेल की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

सावधानियाँ

- बेल के केवल कलमी पौधे लगाने की संतुति की जाती है।
- मूलवृन्त से निकल रही शाखाओं को काटते रहना चाहिए।
- फल के पूर्णतया पकने के बाद ही तोड़ना चाहिए।

प्रौद्योगिकी - 07 : लसोड़ा- थार बोल्ड का जैविक उत्पादन

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

लसोड़ा एक ऐसा फल वृक्ष है जिसे गर्म शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में न्यूनतम कृषि लागत के साथ उगाया जा सकता है। आमतोर पर लसोड़ा को रेगिस्तान का चेरी कहा जाता है। इसे कई अन्य नामों से भी जाना जाता है जैसे गूंदा, गूंदी, लहसुवा, गोंदबेरी, लहटोरा आदि। इसका पौधा मध्यम आकार का, चौड़े पत्ती वाला, पर्णपाती वृक्ष है। लसोड़ा के पौधों में विपरीत दशाओं को सहन करने की अद्भुत क्षमता होती है। इसके पौधे लगभग सभी प्रकार की भूमियों में उगाये जा सकते हैं, किन्तु नम रेतीली दोमट मिट्टी लसोड़ा के पौधों के विकास एवं फल उत्पादकता के लिए सबसे उपयुक्त है। कुछ हद तक यह पौधा लवणता को भी सहन कर सकता है। यदि मिट्टी कार्बनिक पदार्थों से समृद्ध है तो उपज अच्छी मिलती है। जल भराव वाली मिट्टी इसकी खेती के लिए उपयुक्त नहीं है। यह पौधा अधिक ठंढ़क के प्रति संवेदनशील होता है। इसमें सूखा को सहन करने की क्षमता है, इसिलिए यह उत्तर भारत के शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में व्यापक रूप से पाया जाता है। यह मैदानी इलाकों में समुद्र तल से लगभग 200 मीटर ऊपर से शुरू होता है और लगभग 1500 मीटर ऊॅंचाई तक की पहाड़ियों पर पाया जाता है। ज्यादातर क्षेत्रों में लसोड़ा के पौधे जंगलों या बेकार पड़ी भूमियों में अपने आप उगे रहते हैं।

यह एक अवप्रयोगी किन्तु बहुउद्देशीय फलदार वृक्ष है जो गर्म जलवायु में पाया जाता है। पिछले दो दशकों में इस फल की मांग सब्जी एवं अचार बनाने के लिए बहुत बढ़ी है। इसके फल का औषधीय महत्व है। लसोड़ा की हरी पत्तियों को बकरी एवं भेड़ के लिए चारा के रूप में भी प्रयोग किया जाता है। इसीलिए इस फल वृक्ष को किसान आमतौर पर खेत के चारों तरफ लगाना शुरू कर दिये हैं, जिससे न केवल फल प्राप्त होता है अपितु खेत में बोई गयी फसलों को भी बाड़ के रूप में सुरक्षा प्रदान करता है। राजस्थान के पाली, सिरोही, उदयपुर, जोधपुर, जालोर, अजमेर, जयपुर आदि जिलों में इसके वृक्षारोपण किये गये है। लसोड़ा वृक्ष में फूल मार्च–अप्रेल के दौरान आते हैं और फूल आने के तुरंत बाद फल बनने लगते हैं जो मई–जून में सब्जी एवं अचार के लिए कच्ची दशा में तोड़े जाते हैं। पके हुए फल का गूदा हल्का मीठा, चिपचिपा एवं पारदर्शी होता है।

प्रौद्योगिकी विवरण, प्रमुख विशेषताएं एवं लाभ

लसोड़ा ''थार बोल्ड'', भा.कृ.अनु.प.–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर (राजस्थान) से विकसित लसोड़ा की प्रथम प्रजाति है, जिसके फल बड़े आकार के, अधिक गूदा एवं उत्पादकता बहुत अच्छी है। लसोड़ा का बगीचा लगाने हेतु पौध रोपण से एक माह पहले गर्मी के मौसम में गड्ढ़ों को खोदना चाहिये। अच्छी तरह से तैयार खेत में 5–6 मीटर की दूरी पर 2 घनफुट आकार के गड्ढ़ों को खोदकर कम से कम 15 दिन तक खुला छोड़ देना चाहिये। इसके बाद इन गड्ढ़ों को 25 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद एवं चिकनी मिट्टी मिलाकर भर देना चाहिये। ज्यादा से ज्यादा जैविक खाद का प्रयोग पौधों की

स्थापना एवं नमी बनाये रखने के लिए फायदेमंद होता है। वर्षा ऋतु में इन्हीं गड्ढ़ों में लसोड़ा के थार बोल्ड प्रजाति के कलिकायन द्वारा तैयार किये गये पौधों को रोपित किया जाता है। लसोड़ा के इसी प्रजाति के बीजू पौधों को भी रोपित किया जा सकता है, किन्तु उनकी बढ़वार, फलत और गुणवत्ता में विभिन्नता होने के कारण कलमी पौधों के द्वारा बाग स्थापना की संतुति की जाती है। रोपण के तुरंत बाद गड्ढ़े को पानी से अच्छी तरह भर देना चाहिये। यदि आवश्यक हो तो पौधे के बगल में एक डण्डी गाड़कर रस्सी से बांध देना चाहिये जिससे पौधा तेज हवाओं से न गिरे। प्रारम्भिक अवस्था में पौधे का उचित ढांचा विकसित करने के लिए आवश्यक कटाई–छंटाई करते रहना चाहिये। जमीन से एक मीटर की ऊंचाई पर मुख्य तने से निकल रही चार–पांच शाखाओं को विभिन्न दिशाओं में छोड़ देना चाहिए। मूलवृंत से निकलने वाली शाखाओं को काट देना चाहिए। प्रतिवर्ष सूखी, कमजोर एवं कीट–व्याधि ग्रसित शाखाओं को काटते रहना चाहिये।

पोषण के लिए बसंत ऋतु से पूर्व एवं मानसून के मौसम में 50 किलोग्राम सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति वृक्ष देना लाभदायक होता है, जबकि अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में 30 किलोग्राम खाद प्रतिवृक्ष पर्याप्त होती है। जल संचयन के लिए अंदर की तरफ ढलान वाले थाले को बनाना लाभदायक होता है। रोपण के बाद सर्दियों के मौसम में लगभग 15 दिनों के बाद एवं गर्मीयों में 8–10 दिन के बाद पानी देते रहना चाहिये। लसोड़ा में कीड़े एवं बीमारियों की समस्या ज्यादा नहीं होती है। लसोड़ा के बागों में मार्च के महिने में

कतार में लगे लसोड़ा प्रजाति थार बोल्ड के पौधे एवं फलों से लदी डाली

फूल आते हैं तथा मई से जुलाई तक फल पक जाते हैं किन्तु सब्जी या अचार बनाने के लिए फलों को अपरिपक्व अवस्था में ही तोड़ा जाता है। इसलिये यह जानना आवश्यक है कि लसोड़ा के फल लगने के लगभग 30–35 दिन बाद जब वे हरे रंग के हों एवं गूदा सही तरह से बन गया हो तो उन्हें तोड़ लेना चाहिये। लसोड़ा की उपज पेड़ की उम्र, जलवायु, मृदा उर्वरता एवं प्रबंधन पर निर्भर करती है। एक युवा पौधे से 5–10 किलो प्रति वृक्ष फल उत्पादन होता है जबकि पूर्ण विकसित पौधे से 50–100 किलो फल मिल जाता है। इस प्रकार लगभग 150–200 क्विंटल फल प्रति हेक्टेयर आसानी से मिल जाता है और यदि इसे सामान्य बाजार भाव (रू. 10/– किलो) से बेचा जाये तो लगभग रूपये 1–1.5 लाख आमदनी हो जाती है। अपरिपक्व फलों को सामान्यतः सब्जी या मिश्रित अचार के रूप में ताजा या निर्जलीकरण के बाद बिना मौसम में भी प्रयोग कर सकते हैं। इन निर्जलीकृत फलों को वायुरोधी डिब्बों में बंद करके लगभग एक साल तक सामान्य तापक्रम पर सुरक्षित रखा जा सकता है। निर्जलीकृत किये गये लसोड़ा का फल पंचकुटा का भी एक प्रमुख अंग है। उक्त बातों का ध्यान रखकर लसोड़ा की जैविक खेती की जाय तो निश्चित रूप लाभकारी सिद्ध होगी।

सावधानियाँ

- लसोड़ा का बगीचा लगाने के लिए ''थार बोल्ड'' प्रजाति के कलमी पौधों का ही रोपण करना चाहिये।
- लसोड़ा के पौधों को पुष्पन के समय ज्यादा पानी नहीं देना चाहिये।
- लसोड़ा के फलों को सब्जी एवं अचार हेतु कच्ची अवस्था में तोड़ना चाहिये।

प्रौद्योगिकी -08 : करौंदा उत्पादन की उन्नत तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क एवं अर्ध-शुष्क जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

करौंदा भारत का एक स्वदेशी बहुउद्देशीय फल है। जो शुष्क और अर्ध शुष्क क्षेत्रों में बहुत ही कम देखभाल से अच्छी तरह उगाया जा सकता है। यह सौंदर्यीकरण के लिए बाड़ के रूप में भी उगाया जाता है जो कांटेदार प्रकृति के कारण सबसे अच्छी जैव बाड़ के रूप में कार्य करता है। यह भारत में बिहार, पश्चिम बंगाल, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, महाराष्ट्र, राजस्थान, अरावली पहाड़ियों और भारत के दक्षिणी भाग में पाया जाता है। राजस्थान के सभी जिलों में करौंदा सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। शुष्क क्षेत्र में करौंदा को फसल विविधीकरण के रूप में उगाया जाता रहा है। इसमें सूखे को सहन करने की अत्यधिक क्षमता होती है लेकिन फलने के मौसम के दौरान और शुष्क अवधियों के दौरान सिंचाई आवश्यक होती है। पाला रहित गर्म–ठण्डी जलवायु इसकी खेती के लिए उत्तम रहती है। अत्यधिक वर्षा एवं जल प्लावन क्षेत्र इसकी खेती के लिए उयुक्त नहीं है। यह किसी भी प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है किन्तु समृद्ध दोमट मिट्टी फल उत्पादन में सुधार करती है। इसको सूखी, बंजर, रेतीली और पथरीली भूमि में भी लगाया जा सकता है। पड़ती भूमि में पौधारोपण के लिए यह एक उपयोगी पौधा है।

इसके पके फलों से जैली, मुरब्बा, चटनी आदि पदार्थ बनाये जाते हैं। करौंदा के फल एनीमिया के इलाज के लिए बहुत उपयोगी होते हैं और इसमें रोग रोधी गुण पाये जाते हैं। करौंदा के कई उपयोग हैं क्योंकि यह पारंपरिक चिकित्सा में उपयोग किया जाता रहा है। आधुनिक चिकित्सा अनुसंधान में पाया है कि इसमें कई लाभकारी गुण हैं। फल में दर्द निवारक एवं सूजनरोधी गुण पाये जाते हैं। उपरोक्त बातों को ध्यान में रखते हुये भाकृअनुप– केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीछवाल, बीकानेर पर करौंदे की थार कमल नामक किस्म विकसित की गयी है जिसकी उत्पादन तकनीक दी गयी है। यह प्रसंस्करण उद्देश्य के लिए उपयुक्त किस्म है क्योंकि इसमें गहरा लाल रंग, उच्च गूदा, उच्च कुल घुलनशील ठोस सामग्री और शक्करा होती है। यह तुलनात्मक रूप से बौना, जल्दी फलन (3 साल में फल आना शुरू हो जाता है), सघन रोपण, मध्यम सूखा सहिष्णु और जेली एवं कैंडी बनाने के लिए उपयुक्त फल किस्म है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

शुष्क क्षेत्र में करौंदा की उन्नत किस्मों जैसे कि थार कमल को खेत में 3×3 मीटर के अन्तराल लगाना चाहिए। पौधों को जुलाई–अगस्त या फरवरी–मार्च में लगाना चाहिए। बाड़ या फेन्सिंग हेतु अन्तराल 1 से 1.5 मीटर पौधे से पौधे की दूरी रखना चाहिए। सुरक्षात्मक बाड़ के रूप में लगाने वाले करौंदा के पौधों को सीमित उर्वरक की आवश्यकता होती है। हालांकि खाद प्रबंधन करना फायदेमंद होता है। इसलिए फूलों के आने से पहले 10–15 किलोग्राम अच्छी तरह से सड़े हुए गोबर की खाद खेत में डालना उपयोगी होता है। खाद एवं उर्वरक उर्वरक की मात्रा देने का सर्वोत्तम समय फल तुड़ाई के बाद जून–जुलाई एवं फूल आने से पहले फरवरी होता है। इसकी फसल को सिंचाई की बहुत ही कम आवश्यकता होती है क्योंकि सूखे को करौंदा काफी हद तक सहन कर सकता है। हालाँकि, फूलने–फलने के समय समुचित सिंचाई की व्यवस्था होनी चाहिए। पौधे लगाने एवं खाद देने के बाद सिंचाई करना आवश्यक होता है। हालाँकि, ड्रिप सिंचाई को आर्थिक रूप से पानी के प्रभावी उपयोग के लिए अच्छा पाया गया है। पौधों के रोपण के तीन वर्ष बाद से करौंदा फल देना आरम्भ कर देता है। पूर्ण परिपक्व पौधे से प्रति वर्ष 4 से 5 किलो तक फल प्राप्त हो जाते हैं। गर्म शुष्क पारिस्थितिकी तंत्र में अच्छी किस्मों जैसे थार कमल को लगाने पर 10–15 किलोग्राम औषत उपज प्रति पेड़ से ली जा सकती हैं। फलों को कमरे के तापमान पर 3–4 दिनों के लिए संग्रहीत किया जा सकता है। फल अचार, कैंडी और जैम बनाने के लिए उपयोग किए जाते हैं। राजस्थान में करौंदे में किसी प्रकार के विशेष कीट एवं बीमारी का प्रकोप नहीं देखा गया है। अन्य प्रदेशों में कभी कभी ऐन्थ्रेक्नोजए पत्ती खाने वाली सूंड़ी एवं फल मक्खी का थोड़ा प्रभाव देखा जा सकता है। ऐन्थ्रेक्नोज रोग के नुकसान के प्रारंभिक चरण में किसी तांबा आधारित कवकनाशी के छिड़काव से रोग नियंत्रित किया जा सकता है। सूंड़ी से मुख्य रूप से पत्ते खाने से नुकसान पहुंचता है एवं यह पौधों के विकास को प्रभावित करता है। कीटनाशक और जैविक नियंत्रण के उपयोग से सूंड़ी को नियंत्रित किया जा सकता है।

सावधानियाँ

- उन्नत किस्मों के ही पौधे किसी सरकारी संस्थान व नर्सरी से लेकर लगाने चाहिए।
- शुष्क क्षेत्र में करौंदे में कटाई एवं छंटाई बहुत ही कम करना चाहिए।
- गर्मियों में, फूलने–फलने के समय तथा खाद देने के बाद समुचित सिंचाई की व्यवस्था होनी चाहिए।

प्रौद्योगिकी-09 : शुष्क क्षेत्र में फालसा उत्पादन तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क और अर्ध-शुष्क जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

फालसा (*ग्रेविआ सुबनीकुऐलिस* एल) भारत के सबसे पुराने स्वदेशी फलों में से एक है। भारत में यह ज्यादातर शहरों के आसपास के क्षेत्रों में पंजाब, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान और हिमालयी क्षेत्रों में से उगाया जाता है। यह कठोर प्रकृति का होने के कारण शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में इसकी फसल आसानी से की जा सकती है। यह अवप्रयोगी फल फसलों के अंतर्गत आता है। लेकिन यह एक मूल्यवान फल है जिसमें उच्च पोषण और औषधीय गुण होते हैं जो मानव स्वास्थ्य पर कई प्रकार के सकारात्मक प्रभाव डालता है। इसका रस और सिरप बनाकर, एक ताजा और ठंडा पेय के रूप में उपयोग किया जाता है। भारत में गर्मियों के दौरान फालसा के पके हुए ताजे फलों का अथवा शीतल पेय में संवर्धित करके उपभोग किया जाता है। फालसा के पौधे, मिट्टी और पर्यावरण पर भी स्थायी और अच्छा प्रभाव डालता है। अतः इसकी जैविक खेती भी संभव है। शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में फालसा उत्पादन की व्यापक संभावनाएँ हैं। किसी भी शोध संस्थान और राज्य कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा फालसा के सुधार के लिए ज्यादा ध्यान नहीं दिया गया। इसलिए वाणिज्यिक खेती के लिए फालसा में कोई बेहतर किस्म उपलब्ध नहीं थी। अतः फालसे की उपरोक्त उपयोगिताओ को ध्यान में रखते हुए भाकृअनुप–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर (राजस्थान) ने अपने शोध कार्यो से फालसा की 2 नई किस्में विकसित की जो गर्म शुष्क एवं अर्ध–शुष्क जलवायु क्षेत्रों में सीमित संसाधनों के साथ भी अधिक पैदावार देने में सक्षम हैं। संस्थान द्वारा विकसित फालसा उत्पादन की उन्नत किस्मे व तकनीके गर्म शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों फालसा की व्यावसायिक खेती बढ़ावा देने में उपयोगी सिद्ध हो रही है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेशताएं एवं लाभ

हाल ही में, भाकृअनुप–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर ने अपने शोधकार्यो के आधार पर पाया कि फालसा की खेती देश के गर्म शुष्क एवं अर्ध–शुष्क पारिस्थितिकीय तंत्र के लिये बहुत ही उपयुक्त फल फसल है। इसके फलों के पकने, रंग विकास और फलों की गुणवत्ता के लिए पर्याप्त धूप और तापमान आवश्यक हैं जो गर्म शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। संस्थान द्वारा विकसित नई किस्में "थार प्रगति" एवं "सी.आई.ए.एच.–1" अच्छी गुणवत्ता वाली किस्में है जो कम पानी व कम खर्च से भी अच्छी उपज देने में सक्षम है। थार प्रगति अर्ध–शुष्क तथा "सी.आई.ए.एच.–1" शुष्क क्षेत्रों के लिये बहुत ही उपयुक्त किस्में हैं जिनका व्यावसायिक स्तर पर खेती के लिए बढ़ावा दिया जा रहा है।

फालसे के प्रवर्धन के लिये बीज एवं कटिंग से पौधे तैयार करने को मानकीकृत किया गया है। इसका व्यवसायिक स्तर पर प्रवर्धन बीज के माध्यम से किया जाता है। कटिंग से पौधे तैयार करने के लिये जुलाई – अगस्त सबसे उपयुक्त समय होता है। बीज से पौधे तैयार करना बहुत ही आसान होता है तथा उनका लगभग 85–90% अंकुरण आसानी से हो जाता है और इसके पौध 5–6 माह में रोपाई हेतु तैयार

हो जाते है। मानसून के दौरान जुलाई–अगस्त माह में पौधों को खेत में रोपित करना चाहिए। पौधारोपण पंक्तियों में 3×1.5 या 3×2 मीटर (पंक्ति × पौधा) की दूरी पर किया जाना चाहिए। पौधारोपण के एक–दो माह माह पूर्व 60 × 60 × 60 सेमी गहरे व्यास के गड्ढ़े गर्मियों (मई से जून के महिने मे) में खोदकर उनमें अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद को मिट्टी में मिलाकर भर देना चाहिए। फालसा को ज्यादा सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है, परंतु गर्मी के महीनो में अधिक तापक्रम से पोधो को नुकसान होने से बचाने के लिए एक–दो हल्की सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। इसके अतिरिक्त दिसम्बर–जनवरी में कटाई–छटाई के पश्चात 15 दिन के अन्तराल पर दो सिंचाई की जानी चाहिए जिससे फुटान जल्दी एवं अच्छा होता है। पुष्पन एवं फलन के बाद तथा फल अच्छी तरह बन जाने पर मार्च–अप्रैल माह में एक–एक सिंचाईं करने से फलों की गुणवता में वृद्धि होती है। फालसे में कटाई एवं छंटाई प्रक्रियायें बहुत ही महत्वपूर्ण होती है। फालसे को कटाई एवं छंटाई से इस प्रकार से साधा जाता है जिससे कि यह एक झाड़ी का आकर ले सके क्योंकि जितने ज्यादा शाखायें निकलेंगी उतने ही ज्यादा फल उपज होगी। गर्म शुष्क क्षेत्रों में अधिक गुणवत्तायुक्त उपज प्राप्त करने के लिये संस्थान में फालसे की कटाई–छंटाई के समय एवं ऊँचाई को मानकीकृत किया गया है। फालसे की झाड़ियों/पौधों की भूमि की सतह से 15–20 सेमी की ऊँचाई पर से 15–20 जनवरी के आस–पास कटाई करनी चाहिए। इससे फालसे की झाड़ियों/पौधों में नये कल्ले ज्यादा निकलते है, बेहतर गुणवत्ता वाले फल आते है एवं उपज भी अधिक प्राप्त होती है। वैसे तो फालसे से बिना खाद एवं उर्वरक के उत्पादन लिया जा सकता है। परन्तु मरुस्थल की रेतीली मिट्टी में गुणवत्तायुक्त अधिक उत्पादन लेने हेतु खाद एवं उर्वरकों का नियंत्रित उपयोग किया जाना चाहिए। खेत में उचित जीवांश तथा उर्वरा शक्ति बनाए रखने हेतु प्रतिवर्ष अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद अथवा भेड़–बकरी की मींगनी खाद देना चाहिए। कटाई–छटाई के पश्चात, तीन वर्ष के पौधों में 10 किग्रा. सड़ी हुई गोबर खाद देने से पौधों की में अच्छी फुटान एवं वृद्धि होती है। इसके अतिरिक्त यूरिया, डाई अमोनियम फॉस्फेट एवं म्यूरेट आफ पोटाश क्रमशः 100, 50, एवं 100 ग्राम प्रति पौधा/झाड़ी प्रतिवर्ष देना चाहिए। कटाई–छंटाई के लगभग 90–100 दिनों बाद अप्रैल माह के अन्तिम सप्ताह में फल पकना आरम्भ हो जाता है तथा मई महीने तक चलते है। फालसे के फल आकर में छोटे, स्वाद में खट्टा–मीठा एवं देखने में आकर्षक लाल–गहरे बैंगनी रंग होते हैं। जब ये फल के दिखने में आकर्षक लाल–गहरे बैंगनी रंग हो जाते तब वे पक्ककर तुड़ाई योग्य हो जाते हैं। गर्म शुष्क क्षेत्रों में फालसे की फसल पर कोई विशेष रोग एवं कीट का प्रभाव होता है और इनसे नुकसान की सम्भावनाएं भी न के

फालसा किस्म–थार प्रगति

फालसा के परिपक्व फल

फालसा किस्म–सी.आई.ए.एच.–1

बराबर ही रहती है। फालसा की उपरोक्तानुसार खेती करने पर 5–6 साल के एक पौधा/झाड़ी से लगभग 2–3 किलोग्राम ताजे फल प्राप्त किये जा सकते है जो बाजार में 50– 80 रुपये प्रति किलोग्राम के भाव के साथ आसानी से बिक जाते है।

सावधानियाँ

- गर्मी के मौसम में (फल तुड़ाई के समय) में उच्च तापमान होने के कारण फालसा के फल बहुत ही जल्दी ही खराब हो जाते हैं। इसलिए उन्हें तुरंत बेच देना चाहिए या उपयोग में ले लेना चाहिये।
- फालसे में कटाई एवं छंटाई प्रक्रिया बहुत ही महत्वपूर्ण होती है। अतः फालसे के पौधे झाड़ी की कटाई–छंटाई का कार्य सही समय पर हर साल करनी चाहिये।

प्रौद्योगिकी–10 : नींबू उत्पादन की तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायु : सिंचित गर्म शुष्क और अर्ध-शुष्क जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

गर्म शुष्क क्षेत्रों में नींबू (*साइट्रस औरंटीफोलिया*) की खेती किसानों की पोषण सुरक्षा के साथ आय बढ़ाने में सहायक हैं। इन क्षेत्र में पर्याप्त धूप, कम आर्द्रता, कीटों और बीमारियों के कम प्रकोप, उच्च और स्थिर मांग, आकर्षक कीमतें, टिकाऊ उत्पादन के कारण नींबू उत्पादन बहुत लाभदायक सिद्ध हो रहा है। नींबू के पौधें लगाने के 3–4 साल बाद फल देने लगते हैं एवं परिपक्व बगीचे से 8–10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से उत्पादन प्राप्त होता है। गर्म एवं शुष्क जलवायु क्षेत्र में नींबू की खेती से लगभग 2.00 से 2.50 लाख प्रति हेक्टेयर शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

शुष्क क्षेत्रों में नींबू का बगीचा और ताजा फल

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

नींबू की खेती के लिए शुष्क एवं अर्ध–शुष्क जलवायु जहां तापमान 10–35° सेल्शियस के मध्य रहता है, अच्छा होता है। नींबू लवणता के प्रति अत्यधिक संवेदनशील है। इसकी खेती के लिए जल की लवणता (ईसी 1.0 डेसी साइमन/मीटर) से कम तथा मिट्टी का पीएच मान 6.0 से 7.5 तक होना चाहिए। नींबू की खेती अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी, जैसे बलुई–दोमट, दोमट और चिकनी–दोमट मिट्टी में की जा सकती है। नींबू की प्रमुख किस्में विक्रम, प्रमालिनी, साईं सरबती, फुले सरबती, चक्रधर, पी.के.एम.–1, पी.डी.के.वी.–बहार, बालाजी, एन.आर.सी.सी–7 एवं एन.आर.सी.सी–8 है। शुष्क क्षेत्र में साईं सरबती और विक्रम किस्में अधिक उपयुक्त पाई गई है। बाजार में अधिक लाभ लेने के लिए चयन की गई किस्म का छिलका पतला, आकार मध्यम, रस की मात्रा अधिक और गर्मी में फल देने वाले होनी चाहिए।

नींबू का प्रवर्धन बीज, टी बडिंग तथा कलम द्वारा किया जाता है। नींबू की खेती में मूलवृन्त का बहुत महत्व है। यह पौधों में कई अच्छे गुणों का सुधार करता है जैसे फल गुणवत्ता, उच्च उत्पादकता, कीट और रोग के विरुद्ध प्रतिरोधकता तथा विभिन्न वातावरण में अनुकुलनता इत्यादि। नींबू के साइन

(कलिका) को रफ लेमन (जट्टी खट्टी) मूलवृन्त पर टी बडिंग द्वारा प्रत्यारोपित किया जाता है। गर्म शुष्क क्षेत्रों में पौधारोपण के लिए 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढे खोदने चाहिए। वर्गाकार विधि से कलमी पौधों को 6×6 मीटर (275 पौधे प्रति हेक्टेयर) या 6×4 मीटर (400 पौधे प्रति हेक्टेयर) की दूरी पर लगाना चाहिये। नींबू की खेती के लिए पौधारोपण बरसात के मौसम में अगस्त से अक्टूबर अथवा फरवरी से मार्च में करना चाहिए। पौधारोपण के समय मिट्टी में आवश्यकतानुसार खाद व उर्वरक का प्रयोग करें और रोपण के बाद हल्की सिंचाई अवश्य करें। नींबू के 5 वर्ष के पौधे को 30 किलो की गोबर कि खाद, 1 किलो नीम खाद, नाइट्रोजन 450 ग्राम, फास्फोरस 200 ग्राम एवं पोटाश 200 ग्राम प्रतिवर्ष देना चाहिए। इसके अतिरीक्त सूक्ष्म पोषक तत्वों (जिंक 0.5, आयरन 0.2, मैग्नीशियम 0.5 और बोरोन 0.1) का वर्ष में एक–दो बार पर्णीय छिड़काव करना चाहिए। बून्द–बून्द सिंचाई पद्धति से नींबू की खेती लिए बहुत ही उपयुक्त है इससे पानी की बचत (50–60%) के साथ उत्पादन भी 20–30% अधिक होता है। बून्द–बून्द सिंचाई पद्धति से खरपतवार नियंत्रण, उर्वरक तथा पेस्टिसाइड्स के उपयोग की दक्षता बहुत बढ़ जाती है। बून्द–बून्द सिंचाई पद्धति से गर्मियों में सप्ताह में दो–तीन बार तथा सर्दियों में एक बार पानी देना चाहिए। फरवरी–मार्च माह में जब पौधों पर फूल आने लगे तब हल्की सिंचाई करनी चाहिए। नींबू में साइट्रस बटर फलाई, साइट्रस सिल्ला, केंकर एवं सिट्रस डाई बैक प्रमुख कीट एवं रोग है। साइट्रस बटर फ्लाई की रोकथाम के लिए नीम आयल का 0.3 प्रतिशत पानी में मिलाकर स्प्रे करें। बगीचे में लाइट ट्रैप या फूड ल्यूर (10–12 प्रति हेक्टेयर) लगाकर कीटों को आकर्षित कर नष्ट किया जाता है। साइट्रस सिल्ला की रोकथाम के लिए थायामेथोजैम (25 डब्लू जी) 0.4 ग्राम/लीटर पानी में मिलाकर या इमीडाक्लोप्रिड (17–8 एसएल) 0.5 मि.ली./लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें।

शुष्क क्षेत्रों में नींबू में केंकर बहुत गंभीर समस्या है। केंकर से प्रभावित बागों में प्रभावित टहनियों, फलों और पत्तियों को निकालकर नष्ट कर दें और प्रभावित भागों पर 10 प्रतिशत बोर्डो पेस्ट का लेप करें। इसकी रोकथाम के लिए कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 20 ग्राम और स्ट्रैप्टोसाइक्लिन 6 ग्राम को 10 लीटर पानी में मिलाकर स्प्रे करें और अधिक संक्रमण होने पर 30 दिनों के बाद दोबारा स्प्रे करें। सिट्रस डाई बैक की रोकथाम के लिए सूखी टहनियों एवं अन्य भागों को हटाकर 1% बोर्डो मिश्रण या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 2–5 ग्राम प्रति लीटर छिडकाव करें। नींबू में पौधें लगाने के तीन वर्ष बाद फलन में आने लगते हैं। शुष्क क्षेत्रों में नींबू में फल गर्मी के मौसम में मई से अगस्त माह में पकते है जिससे बाजार भाव अच्छा मिलता है। पके फल उचित आकार, हल्के हरे, गूदा हल्के पीले रंग का, अम्लता 6–7 प्रतिशत तथा रस की मात्रा 45–55 प्रतिशत होती है। फलों की दिखावट और बढ़िया गुणवत्ता के अनुसार ग्रेडिंग करनी चाहिए। नींबू के फलों का 9–10° सेल्सियस तापमान और 85–90 प्रतिशत आपेक्षित आद्रता पर 6–8 सप्ताह तक भंडारण किया जा सकता है।

सावधानियाँ

नींबू के फलों की तुड़ाई सावधानी पूर्वक सिकेटीयर से करनी चाहिए ताकी टहनियों और फलों को कोई क्षति न पहुंचे। सभी रसायनों का सावधानी से अनुशंसित मात्रा में ही उपयोग करना चाहिए तथा उपयोग के तुरंत बाद फल नहीं तोड़ने चाहिए। नींबू में ज्यादा पानी नहीं देना चाहए, क्योंकि इससे जड़ गलन व तना गलन आदि रोग आने लगते हैं।

प्रौद्योगिकी – 11 : शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में बेर आधारित फसल प्रणाली

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

गर्म शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में एकल पद्धति से खेती करना जोखिम भरा होता है क्योंकि इन क्षेत्रों में औसत वार्षिक वर्षा बहुत कम होती है एवं खेती सूखे से प्रायः प्रभावित होती है। इन क्षेत्रों का तापमान भी बहुत अधिक होता है, गर्म हवाऐं चलती हैं, जाड़े में पाला भी पड़ता है तथा मृदा उर्वरता बहुत कम होती है। ऐसी परिस्थिति में खेती यदि वैज्ञानिक तरीके से ना की जाये तो प्रायः अलाभकारी होती है। एकल पद्धति से वार्षिक फसलों की खेती करना उन परिस्थितियों में विशेषकर हानिकारक हो जाता है जब कीड़े एवं बीमारियों का अधिक प्रकोप हो जाये, सूखे की दशा उत्पन्न हो जाये या उगाई गई फसल का बाजार भाव बहुत कम हो जाय। ऐसी दशा में बहुवर्षीय फल वृक्षों के साथ यदि वार्षिक फसलों का समायोजन किया जाता है तो इस पद्धति में ज्यादा लाभ एवं जोखिम की समस्या कम हो जाती है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर में बेर आधारित फसल प्रणाली पर एक सफल प्रयोग किया गया जो किसानों के बीच में लोकप्रिय हो रहा है। जैसा कि विदित है, बेर एक सूखा अवरोधी फल वृक्ष है जो शुष्क एवं अर्धशुष्क जलवायु के लिए अत्यंत उपयोगी है, क्योंकि बेर की जड़ें काफी गहरी होती हैं, गर्मी के मौसम में इसकी पत्तियां गिर जाती हैं तथा वर्षा प्रारम्भ होते ही इसमें नई शाखाएं निकलने लगती हैं, जिसके कारण विषम परिस्थिति में भी यह पौधा जीवित रहकर स्वादिष्ट फल देता है। यदि बेर के साथ वार्षिक फसलों को भी समाहित किया जाय तो लाभ और ज्यादा होगा।

प्रौद्योगिकी विवरण, प्रमुख विशेषताएं एवं लाभ

बेर आधारित फसल प्रणाली की स्थापना के लिए सबसे पहले 16 मीटर x 4 मीटर की दूरी पर गर्मी के मौसम में गड्ढे (1घन मीटर आकार) खोद लेना चाहिए। इन गड्ढों को अच्छी तरह से सड़ी हुई गोबर की खाद एवं खेत की अच्छी मिट्टी मिलाकर भर देना चाहिए। यदि चिकनी मिट्टी मिल जाय तो उसका प्रयोग करना और अच्छा रहता है। गड्ढों को उक्त मिश्रण से भरने के बाद अच्छी तरह सिंचाई कर देना चाहिए। इन्हीं गड्ढों में जुलाई–अगस्त के महिनों में देशी बेर (*जिजिफस रोटंडीफोलिया*) के पौधों को रोपित कर देना चाहिए तथा समय समय पर उसकी देखभाल एवं आवश्यकतानुसार सिंचाई करते रहना चाहिए। गर्म हवाओं को रोकने के लिए खेत के चारों तरफ बाड़ लगाना भी आवश्यक होता है जिसमें पश्चिम की ओर खेजड़ी (थार शोभा) के पौधे, दक्षिण की ओर बेल के पौधे (एन बी–5/एन बी–9/गोमा यशी), उत्तर की ओर लसोड़ा के पौधे (थार बोल्ड) तथा पूर्व की ओर फालसा के पौधे (थार प्रगति) लगाना चाहिए। इनमें खेजड़ी, बेल, लसोड़ा को 5 मीटर की दूरी पर तथा फालसा को 1 मीटर की दूरी पर लगाना चाहिए। बेर के देशी पौधों पर एक वर्ष बाद संस्तुत व्यावसायिक किस्मों (गोला/बनारसी कड़ाका/कैथली/उमरान/गोमा कीर्ती) की कलम (पैबंदी चश्मा) चढ़ा देना चाहिए। इस प्रकार

तैयार पौधे की अच्छी तरह देखभाल करते रहना चाहिए तथा प्रारम्भ से ही कटाई–छंटाई करते रहना चाहिए जिससे पौधे की बढ़वार सीधी हो। इसी बगीचे में दो पंक्तियों के बीच उपलब्ध खाली स्थान में वर्षा ऋतु में ग्वार (थार भादवी) तथा शरद ऋतु में सरसों की बुवाई करना चाहिए। बेर के पौधों का प्रति वर्ष कृंतन एवं उसके बाद उचित पोषण आवश्यक होता है। एक पूर्ण विकसित बेर के पौधे को 500 ग्राम नत्रजन, 250 ग्राम फास्फोरस, 250 ग्राम पोटाश तथा 50 किग्रा गोबर की सड़ी हुई खाद की आवश्यकता होती है। कृन्तन के बाद जुलाई में गोबर की खाद, फास्फोरस एवं पोटाश की पूरी मात्रा तथा नत्रजन की आधी मात्रा प्रति वृक्ष के हिसाब से देना चाहिए तथा बची हुई आधी नत्रजन की मात्रा बेर के फल लगने के बाद देना चाहिए। इसी तरह ग्वार एवं सरसों के पोषण का अलग से ध्यान रखना चाहिए। इन अन्तराशस्य फसलों में एक या दो बार सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है और यदि सिंचाई फौवारा विधि से की जाये तो बेर को अलग से पानी देने की आवश्यकता नहीं पड़ती है।

बेर आधारित प्रणाली में प्रथम वर्ष से ही एक वर्षीय फसलों से आप प्राप्त होने लगती है। इस प्रकार तैयार की गई पूर्ण विकसित फसल प्रणाली से सात आठ वर्ष के बाद से लगभग 55–75 क्विंटल बेर, 20–25 क्विंटल हरी ग्वार फली एवं 4–5 क्विंटल सरसों प्रति वर्ष प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त खेत के चारों तरफ लगाये गये पौधे जैसे बेल से 1.5–2.0 क्विंटल फल, लसोड़ा से 2.0–2.5 क्विंटल कच्चे फल, खेजड़ी से 0.50–0.75 क्विंटल हरी सांगरी प्रति वर्ष प्राप्त होती है। बेर के पौधों से फल तोड़ने के बाद प्रतिवर्ष कृंतन भी किया जाता है जिससे 4–5 क्विंटल जलाने हेतु सूखी लकड़ी प्राप्त हो जाती है। इस प्रणाली में यदि लागत (रू. 30–40 हजार) को निकालकर लेखा जोखा लिया जाय तो प्रतिवर्ष लगभग रू. 1.0–1.50 लाख का शुद्ध लाभ प्राप्त किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त एक निश्चित क्षेत्रफल से प्रतिवर्ष आठ प्रकार के उत्पाद (बेर, बेल, फालसा के फल, लसोड़ा के कच्चे फल, बेर से जलाने की लकड़ी, हरी ग्वार फली, खेजड़ी की हरी सांगरी एवं सरसों दाना) प्राप्त होते हैं तथा विषम जलवायु परिस्थिति में भी जोखिम की कम संभावना रहती है। इस प्रणाली में सिंचाई जल की भी बहुत कम आवश्यकता होती है। इस प्रणाली को अपनाने से भूमि की उर्वरा शक्ति भी अच्छी हो जाती है।

सावधानियाँ

- प्रत्येक अवयव (जैसे बहुवर्षीय पौधे बेर, बेल, लसोड़ा, खेजड़ी, फालसा एवं एक वर्षीय फसलें ग्वार एवं सरसों) का प्रबंधन अलग अलग होता है अतः उससे संबंधित ज्ञान होना आवश्यक है।

कृंतन किया हुआ बेर बगीचा

बेर के साथ सरसों

बेर के साथ ग्वार

शुष्क क्षेत्रों में बेर आधारित फसल प्रणाली प्रक्षेत्र परिदृश्य

- इस प्रणाली को विकसित करने के लिए बेर की स्वस्थानिक बाग स्थापना की तकनीक का प्रयोग करना चाहिए।
- बेर में कलिकायन के बाद मूलवृंत से निकल रही शाखाओं को तोड़ते रहना चाहिए।
- सभी अवयवों की मानक उचित प्रजाति को ही रोपित करना चाहिए।
- बहुवर्षीय फल वृक्षों की गुणवत्तायुक्त पौधे एवं एक वर्षीय फसलों के बीज सरकारी/प्रमाणित नर्सरी/बीज भण्डार से ही खरीदना चाहिए।
- बेर, फालसा एवं खेजड़ी के पौधों से फल/सांगरी तुड़ाई उपरांत कृंतन करना आवश्यक होता है।
- कीड़े एवं बीमारियों के प्रबंधन हेतु एकीकृत कीट एवं व्याधि प्रबंधन की तकनीक अपनाना चाहिए।
- विभिन्न अवयवों से अलग अलग समय पर उत्पाद मिलते हैं अतः समय पर तुड़ाई/कटाई तथा उसके विपणन पर भी ध्यान देना चाहिए।

प्रौद्योगिकी - 12 : फल वृक्षों का प्रवर्धन

संस्तुत कृषि जलवायु : उत्तर पश्चिमी गर्म शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

फल वृक्षों का प्रवर्धन बीज एवं कायिक दोनों विधियों द्वारा किया जाता हैं। बीज द्वारा प्रवर्धन को लैंगिक जनन कहा जाता है। बीज के अतिरिक्त पौधे के अन्य किसी भाग से जनन को अलैंगिक अथवा कायिक प्रवर्धन कहते हैं।

कुछ फल वृक्ष जैसे पपीता, फालसा, करौंदा में लंबी किशोरावस्था नहीं होने से तथा कागजी नींबू में बहुभ्रुणता विद्यमान होने से इनका प्रवर्धन बीज के द्वारा किया जाता है। परिणामतः इन फल वृक्षों के बीजू पौधे भी कायिक प्रवर्धन की भांति समरूप होते हैं।

कायिक विधियों से तैयार पौधों में विविधता की संभावना न्यून, पौधे अपेक्षाकृत छोटे तथा शीघ्र फलत में आते हैं। इस कारण व्यावसायिक स्तर पर फलोत्पादन हेतु कायिक प्रवर्धित पौधों को प्राथमिकता दी जाती है जिनमें भी मूलवृंत बीज से ही तैयार किया जाता है। कुछ फल वृक्षों जिनमें कायिक विधियों जैसे कलम (अनार, शहतूत, अंजीर), कलिकायन, (बेर, खेजड़ी, मौसम्बी, किन्नो, आँवला, लसोड़ा, बेल) तथा ऑफ शूट (खजूर) का मानकीकरण किया गया है।

कुछ बीज को फल से निकालते ही बो देना चाहिए जैसे बेल, करौंदा, नींबू, फालसा, लसौड़ा आदि क्योंकि सूखने पर उनकी अंकुरण क्षमता क्षीण हो जाती है। शेष फल बीज को एक निश्चित अवधि तक सावधानीपूर्वक भण्डारित किया जा सकता है।

प्रौद्योगिकी विवरण, प्रमुख विशेषताएं एवं लाभ

बीज से पौध तैयारी हेतु उस जगह की खुदाई कर खरपतवारों को निकालें और अच्छी सड़ी हुई गोबर/पत्ती की खाद डालकर लगभग एक मीटर चौड़ी व 5 मीटर लम्बी क्यारियां आवश्यकतानुसार तैयार कर ले। वहीं पॉलीबैग की तैयारी में छिद्र युक्त थैलियों में मिट्टी, गोबर की खाद व चिकनी मिट्टी का मिश्रण क्रमशः 2:1:1 में मिलाकर भर देना चाहिए। यदि प्रो ट्रे उपयोग में ले रहे हो तो इस अनुपात में कॉकोपीट, वर्मीकुलाइट व परलाइट काम में ले सकते हैं। पौधों की मांग या आवश्यकतानुसार बीज की मात्रा का निर्धारण करना चाहिए जैसे एक किग्रा. बीज से लगभग तीन हजार खेजड़ी, बेल व खट्टी के पौधे तैयार हो जाते है वही इसी मात्रा से बेर व आँवला के चार–पांच हजार बीजू पौधे प्राप्त होते हैं।

स्वस्थ बीजों कों क्रमशः कवकनाशी (मेटालेक्सिल, कार्बेन्डाजिम, ट्राइकोडर्मा), कीटनाशी (इमिडाक्लोप्रिड–70 डब्लयू पी) व कल्चर (एजोटोबेक्टर, एजोस्प्रिलम, पी एस बी) से उपचारित कर उठे तल वाली क्यारियों में या पॉलीबेग या प्रो ट्रे में बोना चाहिए जिनके अंकुरण उपरान्त समय–समय पर निराई–गुड़ाई, खरपतवार निकालना, कीट व्याधि प्रबंधन करते रहना चाहिए।

फालसा, नींबू, करौंदा के परिपक्व फल क्रमशः मई, जुलाई व अगस्त में प्राप्त होते हैं जिनको तुरंत क्यारियों या पॉलीथिन की थैलियों या प्रो ट्रे में बो देवें। फालसा के पौधे बुवाई के 5–6 माह में रोपण हेतु तैयार हो जाते हैं वही करौंदा व नींबू के 11–12 माह के पौधे खेत में लगाने चाहिए।

कलम द्वारा अनार, अंजीर व शहतूत का प्रसारण करते हैं। जिसमें 9–12 माह आयु की शाखाओं का चुनाव जिनकी लंबाई 23–30 सेमी की रखकर (150 पीपीएम सान्द्रता के आई बी ए से उपचारित कर रोपण पॉलीबैग या प्रो ट्रे में जनवरी–फरवरी माह में करते हैं। ये कलम से तैयार पौध जुलाई–अगस्त में खेत में लगाने लायक हो जाते हैं।

कलिकायन द्वारा बेर, आंवला, खेजड़ी, बेलपत्र, लसौड़ा, मौसम्बी, किन्नौं आदि के पौधे व्यावसायिक स्तर पर तैयार करते हैं जिनका फसलवार विवरण निम्न हैः

1 बेर : मूलवृन्त तैयारी में देशी बेर (रोटन्डीफोलिया) की गुठली को तोड़कर बीज पालीथीन की थैलियों में मार्च माह में लगावें, इनका अंकुरण 7–10 दिन में हो जाता है तथा 4 माह के देशी इस मूलवृन्त पर पेच/टी कलिकायन जुलाई–अगस्त माह में कर देते है। कलिकायन के बाद मूलवृन्त पर आये फुटान को हटाते रहे तथा कलिकायन के लगभग एक माह बाद (20–25 सेमी सांकुर बढ़वार युक्त) पौधे खेत में स्थानान्तरण के योग्य हो जाते हैं।

2 आंवला : मूलवृन्त के लिए बीजू पौधा लगभग छः माह से नौ माह पुराना होना चाहिए। स्वस्थ कलिका को पैच कलिकायन जून–जुलाई माह में करना चाहिए। अगस्त– सितंबर माह में कलिका फूटान 30–50 सेमी हो जाने पर खेत में रोपण किया जा सकता है।

3 खेजड़ी : मूलवृन्त तैयारी हेतु बीजों की बुवाई का कार्य अप्रैल–मई माह में कर दें, जिनके 4–6 माह पुराने रिफिल से पैंसिल आकर के मूलवृन्त पर जुलाई–अगस्त माह में आई/टी कलिकायन कर देना चाहिए। जब सांकुर लंबाई 15 सेन्टीमीटर से अधिक की हो उस समय खेत में रोपण करना चाहिए।

4 बेलपत्र : नर्सरी में बीज मई–जून के महीने में बोये जाते हैं। जब बीजू पौधे पैंसिल की मोटाई के आकार के या इससे ज्यादा आकार के हो जावे तो मार्च–अप्रैल या जुलाई–अगस्त में पैच बडिंग की जा सकती है। अर्द्ध शुष्क क्षेत्रों में साफ्ट बुड उपरोपण का कार्य अप्रैल–मई माह में कर दिया जाता है। कलिकायन या उपरोपण के 1½–2 माह उपरान्त पौधे खेत में लगाये जा सकते है।

5 लसौड़ा : मूलवृन्त हेतु बीज बुवाई मई–जून माह में पॉलीथीन थैलियों में या प्रो ट्रे में करे जो कलियायन हेतु पैंसिल आकार से बड़ा (0.6–0.8 सेमी व्यास), होने पर मई से जुलाई माह में कलिकायन (आई/पैंच) कर देना चाहिए। कलिकायन के 1½–2 माह के पश्चात सांकुर लम्बाई 60–70 सेमी होने पर पौधे खेत में लगााने लायक हो जाते हैं।

6 मौसम्बी व किन्नौं : इसके लिए रफलेमन जमबेरी या जट्टी खट्टी के स्वस्थ एवं पके फलों के बीज से मूलवृन्त तैयार करते हैं। बीज निकालकर क्यारियों या पॉलीबैग में फरवरी माह में बो देना चाहिए। जब पौधे क्यारियों में तैयार है तो 10 से 15 सेमी के होने पर पॉलीबैग में जुलाई–अगस्त माह में स्थानान्तरित कर दें, जिन पर आई कलिकायन का कार्य अक्टूबर माह तक करें या एक वर्ष पुराने मूलवृन्त पर मार्च–अप्रैल व अगस्त–अक्टूबर माह कलिकायन हेतु उपयुक्त रहता है। कलिकायन के पश्चात पौधा 35–45 सेमी सांकुर फूटान आने पर खेत में लगाने योग्य हो जाते हैं।

फलवृक्षों के प्रवर्धन में काफी दक्षता की आवश्यकता पड़ती है, किन्तु यदि प्रवर्धन का कार्य आप सीख लेते हैं तो अपने रोपण के लिए तो पौधे तैयार ही कर सकते हैं। आप स्वयं की नर्सरी भी खोल सकते हैं जो कि एक लाभकारी उद्यम है। नर्सरी कार्य में यदि युवा लड़के–लड़कियों को प्रशिक्षण दिया जाय तो यह स्वयं के रोजगार के साथ अन्य लोगों को भी रोजगार दे सकते हैं।

सावधानियाँ

- कमली पौधों को तैयार करने के लिए संस्तुत प्रजातियों का ही प्रवर्धन करना चाहिए।
- मानक पौधों का ही रोपण करना चाहिए।
- मातृवृक्षों की भी देखभाल करते रहना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-13 : फलों की परिपक्वता का निर्धारण एवं निर्जलीकृत उत्पाद

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क एवं अर्ध-शुष्क जलवायु क्षेत्र

परिपक्वता सूचकांक का महत्त्व

भारत फलों का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। भारत में फलों का क्षेत्रफल लगभग 6506 हजार हेक्टेयर एवं उत्पादन 97358 हजार मीट्रिक टन होता है फलों की तुड़ाई के लिए परिपक्वता का सही ज्ञान होना बहुत आवश्यक है। फलों की परिपक्वता का उसके आकार, स्वाद, परिवहन एवं भण्डारण पर गहरा प्रभाव पड़ता है। फलों को अपरिपक्व अवस्था पर तोड़ने पर उसका रंग व स्वाद अच्छा नहीं रहता तथा उद्यानकर्ता को उसका बाजार मूल्य भी अच्छा प्राप्त नहीं होता। अतः आवश्यक है कि किसान को फलों की ठीक परिपक्वता होने की अवस्था का ज्ञान हो जिससे कि वह अपनी उपज का सही मूल्य प्राप्त कर सके। भारत वर्ष में फलों का लगभग 15–20 प्रतिशत भाग अपर्याप्त कटाई उपरांत प्रबंधन की कमी एवं परिपक्वता सुचकांक की कमी के कारण खराब हो जाती है। यदि कटाई उपरांत हानि को कम कर दिया जाए तो बिना उत्पादन बढ़ाए ही फलों और सब्जियों की उपलब्धता बढ़ाई जा सकती है। फल एव सब्जियो में परिपक्वता सूचकांक का विशेष महत्त्व निम्नवत हैं।

1. फलों में वांछित गुणों एवं स्वाद में इजाफा होता है।
2. फलों को उचित अवस्था में तुड़ाई करने से भंडारण अवधि में बढ़ोतरी की जा सकती है।
3. उपभोक्ता तथा उत्पादक दोनों लाभान्वित होते हैं उत्पादकों को अच्छी कीमत मिलती है एव उपभोक्ताओं को गुणवतायुक्त उत्पाद मिलते हैं।
4. परिवहन एवं पैकिग में आसानी होती है तथा उत्पादक, व्यापारी तथा उपभोक्ताओं में आपसी विश्वास बढ़ता है जिससे घरेलू एव विदेशी बाजार को बल मिलता है।

परिपक्वता की दृष्टि से फल दो प्रकार के होते हैं। क्लाइमेट्रिक एवं नान क्लाइमेट्रिक। क्लाइमेट्रिक फलों में परिपक्वन पर श्वसन क्रिया अचानक बढ़कर धीमी पड़ जाती है। श्वसन दर एकाएक बढ़ने के कारण इथिलीन गैस का उत्पादन होता है। इस अवस्था का गुणात्मक परिवर्तनों से काफी सम्बन्ध होता है। क्योकि फलों की अधिकतम स्वीकार्यता (रंग, स्वाद, महक) इसी अवस्था में होती है। क्लाइमेट्रिक फलों में बेल, अमरूद, आदि फल आते हैं। नान क्लाइमेट्रिक फलों में परिपक्वन पर भी श्वशन क्रिया की गति धीमी होती है ऐसे फलों में एथीलीन गैस का स्तर कम होता है। फलों को तुड़ाई के बाद रखकर पकाया नहीं जा सकता है। इन फलों की तुड़ाई तभी करनी चाहिए जब यह फल पूर्णत पेड़ पर ही पक जाएँ। नान क्लाइमेट्रिक फलों के अंतर्गत अनार, नीबू वर्गीय फल, बेर, किन्नौं, मौसम्बी, खजूर, फालसा आदि फल फसलें आती हैं।

विभिन्न फलों की परिपक्वता निर्धारण के मानकः-

1. **अनारः** दूसरे फलों से भिन्न अनार को पेड़ पर पकने के बाद ही तोडा जाता है, फलों को हाथ से दबाने पर दाने के चट्कने की आवाज आती है तथा थपथपाने पर मेटालिक आवाज आती है। फलों के बाह्मदल पुंज बहार की तरफ मुड जाते हैं तथा फल में टी. एस. एस. की मात्रा 12–16 प्रतिशत के बीच तथा अम्लता 0.6–0.78 के बीच होती है। कुल घुलनशील ठोस व अम्लता का अनुपात (70:1) अच्छा परिपक्वतांक माना जाता है।

2. **आँवलाः** आँवले की तुड़ाई मुख्यतः रंग (पीले–हरे) के आधार पर की जाती है। आँवले के फलों में जब कुल घुलनशील ठोस पदार्थ तथा अम्ल का अनुपात के आधार पर एवं विटामिन 'सी' की मात्रा का परिपक्वतांक भी तुड़ाई हेतु प्रयोग किया जा सकता है जो किस्म विशेष पर निर्भर करता है।

3. **किन्नौंः** किन्नौं में आकर्षक रंग पूर्ण परिपक्वता से पहले आ जाता है। अतः रंग का विकास किन्नौं की तुड़ाई हेतु अच्छा सूचक नहीं है, परंतु कुल घुलनशील ठोस पदार्थो व अम्लता का अनुपात यदि 12:1 व 14:1 के बीच है तो तुड़ाई के लिए उतम अवस्था मानी जाती है।

4. **अमरुदः** अमरुद में फलों की तुड़ाई 100–110 दिन बाद की जाती है ऐसी अवस्था में फलों का रंग हल्का हरा एव पीतवर्ण हो जाता है। पके फलों की सापेक्ष गुरुत्वमान 0.8–0.9 के आस–पास पाया जाता है। अगर अमरूद को 0.9 आपेक्षित गुरूत्वमान पर तोड़ा जाये तो उसमें अच्छा रंग, स्वाद, महक विकसित होती है।

5. **खजूरः** फलों का रंग परिवर्तन हरा रंग, पीले या लाल रंग में बदलने लगता है। यह फलों के पकने की पहली अवस्था होती है। इस अवस्था में फलों में शक्ररा की मात्रा बढ़ जाती है एवं नमी एव टेनिन की मात्रा में कमी आ जाती है। फल डोका से डांग अवस्था में मुलायम एव बहुत मीठा हो जाता है। फल कसैले नहीं होते, जिन्हें सीधे खाने के प्रयोग में लिये जाते हैं।

6. **बेरः** बेर के फलों की तुड़ाई मुख्यतः रंग परिवर्तन की अवस्था पर पर की जाती है। इस अवस्था पर फलों में कुल घूलनशील पदार्थो कि मात्रा 15–18 प्रतिशत, तथा सापेक्ष गुरुत्वमान 1 से कम पाया जाता है।

7. **फालसाः** फलों की तुड़ाई गहरा लाल फल होने की अवस्था में करनी चाहिये। इस अवस्था में फलों में कुल घुलनशील ठोस पदार्थ की मात्रा 18–24 प्रतिशत एवं अम्लता प्रतिशत तक पायी जाती है।

निर्जलीकृत उत्पाद

1. **छुहाराः** मेडजूल किस्म के फलों को अच्छी तरह पानी से धोने के पश्चात 10 मिनिट के लिये उबले हुये पानी में डूबाते हैं, उसके बाद ट्रे ड्रायर में वायु

संचारित इलेक्ट्रिक तापमान पर 65–70 डीग्री सेल्सियस पर 45–50 घंटे तक सुखाया जाता है। पिंड खजूर बनाने हेतु पूर्ण डोका अवस्था अथवा डांग अवस्था में फलों को 20 से 30 सेकण्ड के लिये उबलते पानी में डुबोयें, बाद में 30 से 40 डिग्री सैल्शियस पर संचालित भटटी में रखते हैं।

2. **आँवला कैंडीः** आँवला के पूर्ण परिपक्व बड़े आकार के फलों की ग्रेडिंग के बाद अच्छी तरह धोया जाता है। फिर फलों को थोड़े समय के लिये ब्लांचिग की जाती है। ब्लांचिग के बाद फलों को छोटे–छोटे टूकडो में खोल लिया जाता है। फलों के टूकड़ो को 24 घंटे के लिये चीनी की चाश्नी में डुबोया जाता है फिर टूकडों को बहार निकालकर एक बार फिर 70° ब्रिक्स की चाश्नी में 24 घंटे के लिये डुबोकर रखा जाता है। अब चीनी चाश्नी से निकाले टूकडों को 40–50 डिग्री तापमान वाले पानी से धोया जाता है जिससे सतह की चाश्नी हट जाती है। इसके बाद फलों के टूकडों को 50 डीग्री सेल्सियस तापक्रम पर ट्रे ड्रायर में वायु संचारित इलेक्ट्रिक तापमान पर सुखाया जाता है जिससे नमी की मात्रा घटकर 10–15 प्रतिशत रह जाती है। इस प्रकार अच्छी गुणवता की केंडी तैयार हो जाती है।

3. **काचरी पाउडरः** काचरी भारतीय मसालों का मुख्य घटक होता है इसी को ध्यान में रखते हुये शुष्क बागवानी अनुसंधान संस्थान बीकानेर ने काचरी का पूर्व निष्पन मसाला तैयार किया है जिसमें काचरी मुख्य अवयव के साथ काकडिया पाउडर (खेलरा), सहजन, मीठा नीम की पत्तियां, धनिया पाउडर, दाल चीनी, काली मिर्च आदि की सहायता से तैयार किया गया है। जिसका सब्जियों में उपयोग से स्वाद एव सुवास में वृद्धि होती है। इसका उपयोग उत्तर–पश्चिम भारत में विभिन्न प्रकार के पारंपरिक व्यंजनों में खट्टे पदार्थ के रूप में उपयोग किया जाता है। काचरी पाउडर में मौजूद प्रोटीयोलाइटिक एंजाइम शरीर की मरम्मत में मदद करने वाले प्रोटीन के पाचन में उपयोगी होता हैं तथा शरीर में उपस्थित हानिकारक अम्ल को बहार निकालता है। साथ ही शरीर में शीतलन प्रभाव, भूख में सुधार, आसान बाउल सिंड्रोम, पेट दर्द, उल्टी और कब्ज में राहत देता है। भारतीय मसाला उद्योगों में काचरी पाउडर मुख्य अवयव के रूप उपयोग किया जा रहा है।

4. **सांगरीः** सांगरी बनाने के लिये खेजड़ी की कच्ची एवं मुलायम फलियों को फलन के 20 दिन बाद तुड़ाई की जाती है जबकि बिस्किट एवं कुकीज बनाने के लिए पूर्ण रूप से पक्की एवं जमीन पर गिरी हुई फलियों (खोखा) का उपयोग किया जाता है। निर्जलीकरण के लिये मुलायम, कम टैनिन, फाइबर युक्त एवं अपरिपक्व फलियां उपयुक्त मानी जाती है। सबसे पहले फलियों के अवांछित भागों को हटाकर श्रेणीकरण किया जाता है। फिर फलियों को 2 प्रतिशत नमक एवं 0.2 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाई सल्फेट के घोल में 5 मिनिट के लिये ब्लांचिग की जाती है तथा फिर 12–14 घंटे सूर्य के प्रकाश में सुखाया जाता है इस प्रकार हमे 24–28 प्रतिशत गुणवतायुक्त सांगरी प्राप्त होती है।

5. **पंचकुटाः** पंचकुटा पश्चिमी राजस्थान का एक पारंपरिक प्रतिष्ठित व्यंजन है। जिसे भारतीय थार रेगिस्तान में उगाई जाने वाली पांच खाद्य फसलों जैसे सांगरी (प्रोसोफीस सिनरेरिया), केर (केपरीस डेसिडुआ), कुमट (अकेशिया सेनेगल), काचरी (कुकुमिस केलोसस) एवं लसोडा (कार्डिया मिक्सा) से तैयार किया जाता है। इस स्वादिष्ट व्यंजन में उपयोग होने वाले मुख्य अवयवों का अनुपात 50 ग्राम सांगरी, 35 ग्राम केर, 50 ग्राम कुमट, 25 ग्राम लसोड़ा एवं 10 ग्राम काचरी टुकडों के रूप में रखा जाता है। पकाने से पहले रात भर पानी भिगोया जाता है तथा 10 मिनट के लिए नमक तथा हल्दी पाउडर के साथ पकाया जाता है कुछ क्षेत्रों में काचरी एवं लसोडा के स्थान पर कमल डंडी (कमल का तना) एवं अमचूर (सूखे परिपक्व आम) स्थानीय उपलब्धता तथा प्राथमिकताओं के आधार पर उपयोग किया जाता है।

6. **अनारदानाः** भारतीय व्यंजनों में अनारदाना का उपयोग अम्लीय मसाला एव खट्टे–मीठे स्वाद के लिए किया जाता है। इसे अनार के बीजों को गूदा के साथ सुखाकर तैयार किया जाता है। अनारदाने का उपयोग पाउडर एवं दानों के रूप में सेवन किया जाता है। भारतीय व्यंजनों में अनारदाना का उपयोग लोकप्रिय एसिडुलेंट के रूप में अमचूर एव

इमली के विकल्प के रूप में किया जाता है। अनारदाने का औषधीय उपयोग कब्ज एवं पेट की बीमारियों के साथ साथ ह्रदय के लिए अच्छा माना जाता है।

7. **मुखवास**: आँवला एक व्यवसायिक महत्व का शुष्क क्षेत्रीय फल है। भारत में इसकी खेती प्राचीन काल से की जा रही है। आँवला फल में विटामिन 'सी' की मात्रा (400–600 मिग्रा/100 ग्राम) रूप में पायी जाती है। इसके फल में उपस्थित टेनिन की मात्रा विटामिन 'सी' के आक्सीकरण रोकने में मदद मिलती है। ऑवले का परम्परागत उपयोग संरक्षित (मुरब्बा), ॲचार, कैंडी, जैम, जैली, स्क्वैश इत्यादि उत्पाद बनाने के लिए किया जाता है। वर्तमान में उपभोक्ताओं की बदलती जीवन शैली के साथ प्राकृतिक रुप से खाद्य उत्पादो से तैयार आँवला उत्पाद की जरूरत है। इसी प्रयास में केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, में मुखवास उत्पाद तैयार किया गया है जिसमें कद्दुकस किया आँवला का गूदा, चुकन्दर, सौफ एवं मिश्री उत्पादों का उपयोग किया जाता है। इसमें चुकंदर एवं हल्दी रस प्राकृतिक रंग के रुप मे, मिश्री मिठास एवं सौंफ सुवास तथा सुगंध के रुप में उपयोग किया जाता है। इस प्रकार तैयार उत्पाद को 12 महीने तक सामान्य तापमान पर सुरक्षित रखा जा सकता है।

प्रौद्योगिकी –14 : गर्म शुष्क बारानी क्षेत्रों में खेजड़ी "थार शोभा" लगायें

संस्तुत कृषि जलवायु : उत्तर पश्चिमी गर्म शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

खेजड़ी (*प्रोसोपिस सिनेरेरिया*) बहुउपयोगी दलहन वर्ग का काँटेदार वृक्ष होता है, जो मुख्यतया पश्चिमी राजस्थान के शुष्क क्षेत्र व हरियाणा, पंजाब के दक्षिण भाग तथा गुजरात राज्य के उत्तरी भाग में पाया जाता है। खेजड़ी का पौधा बहुत कठोर होता है जो पाला तथा सूखा सहिष्णु होता है। यह गर्म शुष्क क्षेत्रों के न्यूनतम व अधिकतम तापक्रम (–4.0°C से 48°C) में आराम से पनपता है। इसे गर्म शुष्क क्षेत्रों की जीवन रेखा व कल्पवृक्ष भी कहा जाता है। यह गर्म शुष्क क्षेत्रों की आर्थिक, सामाजिक व पारिस्थितिकीय तंत्र को संतुलित रखने में अतिमहत्वपूर्ण कार्य करता है। खेजड़ी इन क्षेत्रों में मुख्यतया भोजन, चारा, जलाऊ व इमारती लकड़ी का प्रमुख स्रोत है। यह जमीन की उर्वरा शक्ति को भी बढ़ाता है। खेजड़ी के वृक्ष पर अप्रेल–मई के माह में फलियाँ आती है जिन्हे स्थानीय भाषा में सांगरी कहते हैं। इन कोमल फलियों (सांगरी) से राजाशाही सब्जी व अचार बनाए जाते हैं जो बहुत ही पौष्टिक व स्वादिष्ट होते है। खेजड़ी की मुलायम सांगरियों को तोड़कर पानी में उबालकर सुखा ली जाती है, जिसे वर्ष भर सब्जी व अचार बनाने के काम में लिया जाता है। इन मुलायम सूखी सांगरियों का बाजार भाव बहुत अधिक होता है। स्थानीय बाजारों में ये सूखी सांगरियां 400–1000 रुपये प्रति किलोग्राम (उपभोक्ता बाजार मूल्य) के भाव से मिलती है। उपभोक्ता को ध्यान में रखते हुये भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर (राजस्थान) ने सर्वप्रथम खेजड़ी की एक विशेष उन्नत किस्म जिसे "थार शोभा" कहा जाता है का विकास किया। इसके विकास के लिए भारतवर्ष के संपूर्ण गर्म शुष्क क्षेत्र (राजस्थान, हरियाणा, पंजाब एवं गुजरात राज्य) का सघन सर्वेक्षण किया गया और अनेक आशाजनक जननद्रव्यों का संग्रह कर मूल्यांकन किया गया। इनमें से सबसे अच्छे और वांछित गुणों वाले जननद्रव्य का चयन कर खेजड़ी की "थार शोभा" किस्म का विकास किया गया।

प्रौद्योगिकी का विवरण, प्रमुख विशेषताएं एवं लाभ

"थार शोभा" किस्म विश्व में खेजड़ी की प्रथम किस्म है जो माध्यम आकार एवं काँटा रहित होती है जिसके कारण सांगरी तुड़ाई करना बहुत ही सुगम एवं आसान रहता है। इसमे लगने वाली सांगरी (फलियों) की लम्बाई (13.1–20.2 सेमी) अधिक होती है। यह देखने में सुंदर, पतली व आकर्षक होती है। इन फलियों (सांगरी) में बीज छोटा होता है। इनका बाजार भाव ज्यादा मिलता है। "थार शोभा किस्म के पौधों पर लूंग (पत्तियों) की मात्रा भी, देशी पौधों के बजाय डेढ़ से दो गुना ज्यादा आती है। "थार शोभा" किस्म के पौधे जल्दी ही परिपक्व हो जाते है और यह तीन वर्ष बाद ही सांगरी (फलियाँ) लगना शुरू हो जाती है जिससे किसानों को जल्दी ही आमदनी मिलनी शुरू हो जाती है। "थार शोभा" किस्म के पौधो में व्यवसायिकी स्तर पर सांगरीयों का उत्पादन 4–5 वर्ष में शुरू हो जाता है जबकि देशी

पारंपरिक पौधों में सांगरी का व्यवसायिक स्तर पर उत्पादन 8–10 वर्ष बाद शुरू होता है। इस किस्म से प्रति हेक्टेयर उत्पादन व आय भी डेढ़ से दो गुना ज्यादा मिलती है। खेजड़ी आधारित अंतःशस्य फसल पद्धति बगीचा लगाने में पौधे से पौधे की दूरी 8×8 मीटर (कुल 156 पौधे प्रति हेक्टेयर पर पूर्व से पश्चिम पंक्ति लगाना सर्वाधिक उपयुक्त रहता है। प्रक्षेत्र में पौध रोपण से पूर्व ही उपरोक्त चयनित विधि से पौधे लगाने के लिए रेखांकन की सहायता से 60×60×60 सेमी आकार के गड्ढे तैयार कर लिए जाते हैं। इन गड्ढों में वर्षा आगमन पर जुलाई के महीने में खेजड़ी के बीजों की बुवाई या नर्सरी में तैयार 6 से 8 महीने के बीजू पौधे लगा देते हैं या "थार शोभा" उन्नत किस्म के पेबन्दी द्वारा तैयार पौधे सीधे ही लगा दिये जाते हैं। स्वस्थानिक (*In-situ*) विधि द्वारा थार शोभा उन्नत पौधे तैयार करने के लिए खेत में पहले से ही स्थापित (12 से 18 माह के) पौधे पर 'पैच' या आई बडिंग (कलिकायन) विधि का उपयोग सर्वोत्तम रहता है। ये बडिंग (कलिकायन) का कार्य जुलाई से सितंबर के महीने तक करना उचित रहता है।

अच्छे प्रबंधन के साथ उगाई गई खेजड़ी की "थार शोभा" किस्म के चार–पांच साल के एक पौधे से प्रति वर्ष 3–5 किग्रा. मुलायम गीली सांगरी या 0.75–1.25 किग्रा. मुलायम सूखी सांगरी प्राप्त की जा सकती है। दस–बारह साल के एक पूर्ण विकसित पौधे से प्रति वर्ष 7–8 किग्रा. मुलायम गीली सांगरी या 1.75–2.00 किग्रा. मुलायम सूखी सांगरी प्राप्त की जा सकती है। इस तरह से प्रति हेक्टेयर (156 पौधों) से 10.92–12.48 क्विंटल मुलायम गीली सांगरी या 2.73–3.12 क्विंटल मुलायम सूखी सांगरी प्राप्त की जा सकती है। ये मुलायम गीली सांगरी बाजार या कृषि मंडी में 60–80 रुपये/किग्रा. एवं मुलायम सूखी सांगरी 300–500 रुपये/किग्रा. (कृषक मूल्य) के भाव से बिकती है। इस तरह, दस–बारह साल के एक हेक्टेयर (156 पौधों) "थार शोभा" के बगीचे से वर्ष भर में किसान को लगभग 65520–99840 रुपये की गीली सांगरी से तथा 81990–156000 रूपये की मुलायम सूखी सांगरी से सकल आय हो सकती है। इसके अलावा दस–बारह साल के एक पौधे से 8–10 किग्रा. गीली लूंग (गीली पत्तियां) एवं लगभग 10–12 किग्रा. ईंधन की लकड़ी प्राप्त की जा सकती है।

खेजड़ी की थार किस्म का बगीचा

खेजड़ी की थार शोभा किस्म की सांगरी (फलियाँ)

सावधानियाँ

- खेजड़ी की "थार शोभा" किस्म का उच्च कोटि का बगीचा विकसित करने के लिए स्वस्थानिक (*In-situ*) पेम चढ़ाने (बडिंग) की तकनीकी का उपयोग किया जाना चाहिए।
- पौधशाला में मूलवृंत तैयार करके और उन पर थार शोभा के पेम चढ़ाकर भी इस किस्म के पौधे तैयार किए जा सकते हैं। परन्तु स्वस्थानिक विधि से तैयार किए गए पौधे अधिक अच्छे होते हैं।
- "थार शोभा" के स्वस्थ व प्रौंढ़ पौधे से ही कलिकायन (बाडिंग) के लिये स्वस्थ व पूर्ण विकसित कालिका का चयन करना चाहिए और कलिकायन का कार्य सावधानी से करना चाहिए।
- "थार शोभा" के पेड़ों की कंटाई–छंटाई का कार्य सांगरियों के तौड़ने के बाद ही मई महीने के अंत में या जून के महीने में करना चाहिए।
- "थार शोभा" के बगीचे छोटे पौधों को पशु–पक्षियों से बचाने हेतु संरक्षण देना बहुत आवश्यक है। छोटे पौधों को नमी संरक्षण देना एवं उच्च तापमान से भी बचाना जरूरी होता है।

प्रौद्योगिकी - 15 : काचरीः ए.एच.के.-119 की उत्पादन तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

काचरी कुष्माण्ड कुल का एक वर्षीय, मौसमी व फैलने वाली शाकीय लता या बेलदार पौधा है। यह वानस्पतिक समूह में कुकुमिस मेलो की जंगली, अवर्णित एवं अप्रचलित प्रजाति केलोसस/एग्रेटिस (non & dessertic form of Cucumis melo var- callosus /agrestis) अथवा पर्यायरूपी कुकुमिस केलोसस या कल्चर के नाम से संकलित है। देश के विभिन्न भागों की स्थानीय भाषा में इसको काचरिया, काचर, मट—काचर, काचरा, सैंद, छोटी सैंद, बड़ी सैंद, सैंदा, संेघा, पथेया, गोरड़ी इत्यादि के नाम से पहचानी जाती है। देश के मरुस्थलीय अँचल में लोगों के खान—पान, तीज—त्योहार व लोकगीत, धार्मिक पूजन सामग्री आदि में काचरी का विशेष महत्व है। सदियों से काचरी के ताजा फलों का सब्जी, चटनी व सलाद में उपयोग तथा सूखे फलों को संरक्षित कर वर्षभर सब्जी व चटनी के लिए उपयोग, बाजार में ताजा व सूखे फलों का व्यवस्थित व्यवसाय, सूखे फलों के चूर्ण का व्यावसायिक स्तर पर मसाला पाउडर में प्रयोग, औषधीय गुणधर्म इत्यादि काचरी की बहु—उपयोगिता को सिद्ध करते हैं। पूर्ण पके फलों को ताजा अथवा सलाद के रूप में खाया जाता है। काचरी फलों को वर्षभर उपयोग के लिए सुखाकर भंडारित किया जाता है। सुखाकर भण्डारित की हुई काचरी का उपयोग सब्जी, चटनी व अचार अथवा चूर्ण (पाउडर) बनाकर कई तरह के सब्जी मसालों में प्रयोग किया जाता है। मरुअँचल की अति लोकप्रिय सब्जी **"पंचकूटा'** का भी काचरी एक मुख्यः घटक है।

काचरी के उपरोक्त महत्व को ध्यान में रखते हुये, भा.कृ.अनु.प.—केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर द्वारा देश में पहली बार काचरी की एक उन्नत किस्म **"ए.एच.के.—119"** विकसित की है। इसके उत्पादन की नवोन्मेषित तकनीकि का भी विकास किया। यह किस्म शुष्क व अर्ध—शुष्क क्षेत्रों में व्यावसायिक खेती के रूप में कारगर साबित हो रही है। वर्तमान में इस उन्नत किस्म एवं उत्पादन तकनीकियों को अपनाकर किसान की एकल फसल में विशेष रूचि ले रहे हैं तथा देश के शुष्क एवं अर्ध—शुष्क कृषि—जलवायु वाले राज्यों विशेषकर राजस्थान के सीमित वर्षा वाले क्षेत्रों में इस की व्यवस्थित खेती ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतु में की जा रही है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं व लाभ

काचरी गर्म जलवायु वाली फसल है। इसके पौधे शुष्क व अर्ध—शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों में अच्छी तरह पनपते हैं तथा इसकी ग्रीष्म एवं वर्षाकालीन फसल के रूप में सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है। काचरी की वर्षा आधारित खेती के लिए जून के अंतिम सप्ताह से लेकर जुलाई महीने के अंत तक जब भी अच्छी वर्षा का दौर हो, बुवाई कार्य करें। इसी तरह वर्षा एवं ग्रीष्म कालीन सिंचित फसल के लिए बुवाई क्रमशः जुलाई एवं फरवरी महीने में करना उपयुक्त रहता है। सुनिश्चित सिंचाई व्यवस्था होने पर संसाधनों के अनुरूप उत्पादन की नाली या बूंद—बूंद या फव्वारा विधि अपनाकर चयनित किस्मों

की सफलतापूर्वक खेती की जा सकती है। काचरी की उन्नत किस्मों के बीज, सामान्यतः एक हेक्टेयर फसल क्षेत्र के लिए 1.0–1.5 किलोग्राम पर्याप्त रहता है। काचरी की किस्म एएचके–119 को नाली अथवा बूँद–बूँद प्रणाली में बुवाई के लिए 500–750 ग्राम बीज/हेक्टेयर पर्याप्त रहता है। बुवाई के तुरंत पहले कैप्टान, थाइरम या बैवेस्टिन (2–3 ग्राम दवा/किलोग्राम की दर) से उपचारित करना चाहिये। नाली विधि से बुवाई करने पर 1.5–2.0 मीटर की दूरी पर 50–60 सेमी चौड़ी एवं 20–25 सेमी गहरी नाली बनाई जाती है। इनकी लम्बाई 50 मीटर तक रखी जाती है। बीजों की बुवाई करते समय एक स्थान पर 2–3 बीज बोये जाते हैं। 18–21 दिनों बाद इन पौधों की छंटनी की जाती है और एक जगह पर एक या दो पौधे ही रखे जाते हैं। बीजों में शीघ्रता एवं अधिकतम अंकुरण के लिए 20°–22° सेल्सियस तापमान तथा 32°–38° सेल्सियस तापमान पौधों में वानस्पतिक वृद्धि एवं फल लगने के लिए क्रमशः सर्वाधिक उपयुक्त है। गर्म मरुस्थलीय अँचल में जहाँ अधिकतम तापमान 45°–48° सेल्सियस तक रहता है वहाँ भी इसकी सफलतापूर्वक खेती होती है। संस्थान द्वारा विकसित डिग्गी आधारित काचरी की जल बचत फसल उत्पादन की स्वदेशी व्यवस्थायें विकसित की गई है। इस संरक्षित उत्पादन तकनीकी में दिसम्बर के अंत से जनवरी के प्रथम सप्ताह तक बीजों की वर्णित विधियों से खेत में बुवाई कर नालियों/लोहे के ढाँचों को पॉलीथीन की चादर से ढका जाता है तथा इनमें प्रारंभ के 30–35 दिनों तक फसल को अत्यधिक ठंड व पाले के प्रकोप से सुरक्षित रखा जाता है एवं फरवरी के प्रथम सप्ताह में पॉलीथीन को हटाकर सामान्य कृषि क्रियाओं से अगेती फलन प्राप्त की जाती है। मरुस्थलीय रेतीली मिट्टी वाले खेतों में सब्जी फसल उत्पादन के लिए प्रतिवर्ष गोबर (200–250 क्विंटल/हेक्टेयर) खाद वं 80–100 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40–50 किलोग्राम फॉस्फोरस एवं 40 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देवें। फसल को दीमक एवं भूमिगत कीड़ों से बचाव के लिए मिथाइल पेराथियान (20–25 किलोग्राम / हेक्टेयर पाउडर का भुरकाव खेत में पाटा लगने से पहले करना चाहिये।

काचरी की उन्नत किस्म "ए.एच.के.–119" की फसल तथा फल

काचरी की फसल में कीड़ों तथा कीट नियंत्रण के लिए उचित फसल चक्र अपनावें, खेत के आस–पास की भूमि को खरपतवारों से मुक्त एवं साफ–सुथरा रखें, जून महीने के दूसरे पखवाड़े में खेत को मिट्टी पलटने वाले

हल से गहरी जुताई करें, खरपतवार एवं रोगग्रस्त पौधों को समय–समय पर निकालकर नष्ट करें। उचित जल निकास की व्यवस्था रखें। फसल चक्र अपनावें। बीजों को उचित रासायनिक दवा व जैविक पदार्थों से उपचारित कर बुवाई करें। काचरी की फसल में कीट व व्याधि नियंत्रण के लिए **"समन्वित कीट व व्याधि प्रबंधन"** करना सर्वोत्तम रहता है।

शुष्क क्षेत्रों में उन्नत प्रौद्योगिकी को अपनाकर की गई काचरी की खेती से 95–100 क्विंटल प्रति हेक्टेयर काचरी के फलों का उत्पादन तथा प्रति मौसम में प्रति हेक्टेयर से 75000–150000 रुपये की सकल आय प्राप्त कर सकते है जो परम्परागत विधि की तुलना में किसान को 30–35 प्रतिशत उत्पादन एवं आय अधिक प्राप्त हो जाती है। बहु–उपयोगी महत्त्वताओं एवं कम लाग्त से अधिक आर्थिक लाभ तथा वर्ष में दो फसल उत्पादन क्षमता के कारण यह मरुअँचल की अतिलाभकारी हो रही है।

सावधानियाँ

बीजोपचार, उचित बीज दर, समय पर बुवाई व फलों की तुड़ाई, बूंद–बूंद सिंचाई प्रणाली पर जोर, समन्वित रोग व व्याधि प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

प्रौद्योगिकी -16 : फूट ककड़ीः ए.एच.एस.-82 की उच्च उत्पादन की तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म-शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

फूट ककड़ी (snap melon, kakdia, phoot) कुष्माण्ड कुल का एक वर्षीय, मौसमी व फैलने वाली शाकीय लता या बेलदार पौधा है। राजस्थान में फूट ककड़ी को एक घटक फसल के रूप में अपनाना, परिपक्व फलों को सब्जी, रायता, सलाद, पके फलों को सुखाकर वर्ष भर सब्जी के लिए संरक्षित, बीजों की गिरी को ठंढ़ाई में एवं औषधीय गुणधर्म इत्यादि इसकी बहु–उपयोगिता को सिद्ध करते है। कुष्माण्ड कुल की इस स्थानीय सब्जी फसल को व्यावसायिक स्तर तक ले जाने के लिए संस्थान ने इसके जननद्रव्य संग्रहण एवं संरक्षण के साथ–साथ किस्मों तथा उत्पादन तकनीकियाँ विकसित करने के लिए सघन अनुसंधान कार्य किये हैं। केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर द्वारा देश में पहली बार फूट ककड़ी की उन्नत किस्म (ए.एच.एस.–82) व नवोन्वेषित तकनीकियों का विकास किया। देश के शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में फूट ककड़ी फसल उत्पादन की व्यावसायिक महत्व को देखते हुए, राजस्थान के सीमित वर्षा वाले क्षेत्रों में संस्थान द्वारा विकसित उन्नत किस्म व उत्पादन तकनीक अपनाकर फूट ककड़ी की व्यवस्थित खेती ग्रीष्म एवं वर्षा ऋतु में की जा रही है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं व लाभ

फूट ककड़ी शुष्क व अर्धशुष्क प्रदेशों की कृषि जलवायु में अच्छी तरह पनपती हैं। फूट ककड़ी के पौधे कम वर्षा, अधिक अंतराल का सूखा (10–15 दिन) एवं अधिकतम तापमान (45–48 डिग्री सेल्सियस) वाली शुष्क वातावरणीय पारिस्थितिकी को सहन करने की क्षमता रखते हैं। इन्हीं विशिष्ट लक्षणों के कारण ही गर्म मरुस्थलीय जलवायु में कम वर्षा (250–300 मिलिमीटर) अथवा सीमित सिंचाई से भी अच्छी वानस्पतिक वृद्धि एवं फल उपज प्राप्त होती है। फसल बुवाई के समय बीजों का शीघ्रता एवं अधिकतम अंकुरण के लिए 20–22 डिग्री सेल्सियस तापमान एवं पौधों में वानस्पतिक वृद्धि व फल बनने के लिए 32–38 डिग्री सेल्सियस तापमान सर्वाधिक उपयुक्त है, लेकिन 45–48 डिग्री सेल्सियस तक भी इसकी सफलतापूर्वक खेती की जाती है।

फूट ककड़ी की निरन्तर पैदावार के लिए चक्रीय प्रणाली से फसल बुवाई व कटाई पश्चात् तैयारियाँ एवं कृषि–क्रियाएं जिनमें गहरी जुताई, वर्षा जल संग्रहण तथा नमी संरक्षण प्रमुख हैं। फसलों को दीमक व भूमिगत कीड़ों से बचाव के लिए खेत में नीम की खली (25 किलोग्राम/हेक्टेयर) का पाटा लगने से पहले भुरकाव करें। तैयार खेत में संसाधनों के अनुरूप कुड़, नाली एवं बूँद–बूँद अथवा फव्वारा विधि अपनाकर फूट ककड़ी का उत्पादन लाभप्रद रहता है। रेतीले खेतों में अच्छी जीवांश की मात्रा बनाए रखने के लिए प्रतिवर्ष 200–250 क्विंटल/हे. गली सड़ी खाद, नाइट्रोजन (80–100), फॉस्फोरस (40–50) एवं पोटाश (40) (किलोग्राम प्रति हेक्टेयर) भूमि की उर्वरा शक्ति बनाए रखने तथा फूट ककड़ी की व्यवस्थित खेती

के लिए आवश्यक है। सामान्य पद्धति से एक हेक्टेयर फसल क्षेत्र बुवाई के लिए 1.5–2.0 किलोग्राम बीज पर्याप्त रहता हैं, परंतु बीज की यह मात्रा सिंचाई विधि एवं उत्पादन प्रबंधन पर निर्भर करती है। संस्थान में फसल बुवाई तकनीकी पर किए गए अनुसंधान कार्यों में फूट ककड़ी की किस्म ए.एच.एस.–82 के बीजों को उपरोक्त वर्णित विधि से उपचारित तथा कुड, नाली अथवा बूँद–बूँद पद्धति में बुवाई के लिए 1.0–1.25 किलोग्राम/हेक्टेयर पर्याप्त रहा है। बीजों को बुवाई के तुरंत पहले कैप्टान, थाइरम या बैवेस्टिन (2–3 ग्राम/किलोग्राम) से उपचारित करें। पौधों के आस–पास एक–दो हल्की निराई–गुड़ाई लाभप्रद रहे हैं। फसल से अधिक फल–उपज के लिए फूट ककड़ी के पौधों में अच्छी वानस्पतिक बढ़वार आवश्यक है इसलिए बुवाई का कुड या नाली खरपतवारों से मुक्त रखा जाना चाहि, तथा यह कार्य 18–21, 30–35 एवं 45–50 दिनों की फसल अवस्था पर करना करना सर्वाधिक उपयुक्त रहा है।

फूट ककड़ी की फसल में कीड़ों के नियंत्रण के लिए उचित फसल चक्र अपनायें व आस–पास की भूमि को खरपतवारों से मुक्त रखें। जून महीने के दूसरे पखवाड़े में खेत को मिट्टी पलटने वाले हल से गहरी जुताई करें। फूट ककड़ी में इनके प्रभावी नियंत्रण के लिए एक किलोग्राम रासायनिक कीटनाशी दवा व एक किलोग्राम नीम की सूखी पत्तियों का बारीक पाउडर को 10 किलोग्राम राख में मिलाकर खेत में खड़ी फसल पर बुरकाव करें। खेत की स्वच्छता ही बीमारियों से बचाव का एक सरल उपाय है। बीजों को उचित रासायनिक दवा व जैविक पदार्थों से उपचारित कर बुवाई करें। फूट ककड़ी की फसल में कीट व व्याधि नियंत्रण के लिए **"समन्वित कीट व व्याधि प्रबंधन"** करना सर्वोत्तम रहता है।

शुष्क क्षेत्रों में फूट ककड़ी की फसल उत्पादन में उन्नत किस्में व तकनीकियाँ अपनाकर प्रत्येक सीजन में लगभग 165–225 क्विंटल प्रति हेक्टेयर फल उपज तथा 65000–105000 रुपये की शुद्ध आय प्राप्त की जा सकती है।

फूट ककड़ी की उन्नत फसल उत्पादन प्रक्षेत्र का परिदृश्य

फूट ककड़ी की उन्नत किस्म के परिपक्व फल

सावधानियाँ

- बीजोपचार, उचित बीज दर, समय पर बुवाई व समय पर फलों की तुड़ाई, बूंद–बूंद सिंचाई प्रणाली एवं समन्वित रोग व व्याधि प्रबंधन पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

प्रौद्योगिकी - 17 : लौकी उत्पादन की उन्नत तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

लौकी (लगेनेरिया साइसिरेरिया) एक महत्त्वपूर्ण कद्दूवर्गीय सब्जी है। इस के फलों को सब्जी के अलावा विभिन्न प्रकार के व्यंजन जैसे रायता, कोफता, हलवा, खीर इत्यादि बनाने के लिए प्रयोग करते हैं। यह कब्ज को कम करने पेट को साफ करने खाँसी या बलगम दूर करने में अत्यंत लाभकारी है। इसके मुलायम फलों में प्रोटीन, कार्बोहाईड्रेट, खाद्य रेशा, खनिज लवण के अलावा प्रचुर मात्रा में अनेक विटामिन पाये जाते हैं। लौकी की अच्छी पैदावार के लिए गर्म एवं आर्द्रता वाले भौगोलिक क्षेत्र सर्वोत्तम होते हैं। बीज अंकुरण के लिए 30–35° सेल्सियस तथा पौधों की बढ़वार के लिए 32–38° सेल्सियस तापमान उत्तम होता हैं। शुष्क व अर्ध–शुष्क प्रदेशों में जहाँ दिन का तापमान लम्बी अवधि तक 40 डिग्री सेल्सियस से ऊपर रहता है तब भी सिंचाई की समुचित व्यवस्था होने पर अच्छा उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। पश्चिमी राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्र में लौकी की फसल बहुत कम होती थी परंतु, हाल ही में भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकनेर (रजस्थान) ने लौकी उत्पादन की नई तकनीकी विकसित की है जिनसे गर्म शुष्क क्षेत्रों में लौकी की फसल उगाने को अधिक बल मिल रहा है। संस्थान ने लौकी पर अनुसंधान कार्य करने हेतु स्थानीय जनन द्रव्यों, उन्नत किस्मों एवं संकर प्रजातियों को इकट्ठा कर उनका मूल्यांकन कर एक उन्नत किस्म ''थार समृद्धि'' व उसकी उत्पादन की नई तकनीकी विकसित की जो शुष्क क्षेत्रो के किसानों के लिए लाभकारी सिद्ध हो रही है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, प्रमुख विशेषताएं एवं लाभ

गर्म शुष्क क्षेत्र जैसे पश्चिमी राजस्थान में लौकी की फसल जायद (गर्मी) तथा खरीफ (बरसात) दोनों ऋतुओं में सफलतापूर्वक उगायी जा सकती है। बरसात की फसल के लिए जून–जुलाई और गर्मी की फसल के लिए फरवरी–मार्च में फसल की बुवाई की जाती है। उन्नत तकनीक से फसल बुवाई हेतु 2.0–2.5 किलोग्राम/हेक्टेयर बीज पर्याप्त होता है। लौकी की उन्नत किस्म ''थार समृद्धि'' की फसल ड्रिप सिंचाई प्रणाली पर आसानी से की जा सकती है। ड्रिप सिंचाई प्रणाली के अंतर्गत कतार से कतार की दूरी 2.0–2.5 मीटर और पौधे से पौधे की दूरी 50 सेंटीमीटर पर बुवाई की जानी चाहिए। प्रत्येक बुवाई स्थल पर, 2–3 बीज बोए जाते हैं। अच्छे अंकुरण के बाद, प्रत्येक बुवाई स्थल पर इष्टतम पौधों के घनत्व के लिए एक या दो स्वस्थ पौधों को रखते हुए अन्य पौधों को हटा देना चाहिये। खेतों में अच्छी जीवांश के लिये देशी खाद 200–250 क्विंटल/हेक्टेयर प्रतिवर्ष देवें। लौकी की व्यवस्थित खेती के लिये रासायनिक उर्वरकों में 80 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40 किलोग्राम फॉस्फोरस व 40 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से देना आवश्यक है। नाइट्रोजन की आधी मात्रा तथा फॉस्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा बुवाई से पहले खेत की तैयारी के समय दें। नाइट्रोजन की आधी मात्रा को युरिया के रूप में तीन भागों में बाँटकर फसल बुवाई के 18–25 दिनों बाद, दूसरी 30–35 दिनों पर जब पौधों में फैलाव एवं फूलों का आना प्रारम्भ हो तथा अंतिम भुरकाव 45–50 दिनों पर जब फल जमाव प्रारम्भ होते हैं उस

समय देना सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है। साथ ही इन अवस्थाओं पर फसल की निराई– गुड़ाई का कार्य भी किया जाना चाहिये। समय–समय पर खेत से खरपतवार निकालते रहना चाहिये। एफिड, थ्रिप्स और हाडडा बीटल को नियंत्रित करने के लिए बुवाई के 18–25 और 30–35 दिन बाद कीटनाशक जैसे इमिडाक्लोप्रिड 17.8 SL (@0.4–0.5 मिली/लीटर और डाइमेथोएट (@1.5 मिली/लीटर) का छिड़काव करने की सलाह दी जाती है। फलों की मक्खी के प्रबंधन के लिए व्यावसायिक रूप से उपलब्ध क्यू–ल्यूर ट्रैप को (7–8 नग प्रति हेक्टेयरं) स्थापित किया जाना चाहिए। इसे एक लीटर पानी में 250 ग्राम गुड़ व 4–5 मिली मैलाथियान 50% ईसी मिलाकर स्थानीय स्तर पर तैयार किया जा सकता है। संक्रमण ज्यादा होने पर डाइमेथोएट 30% ईसी (2.0 मिली/लीटर) या स्पिनोसेड 45% एससी (0.3–0.4 मिली/लीटर) दवा का छिड़काव करना चाहिए।

अनुशंसित उत्पादन तकनीक के साथ उच्च तापमान के लिए सहिष्णु किस्मों जैसे ''थार समृद्धि" को अपनाकर लौकी की खेती करने से राजस्थान के शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों के किसानों के उत्पादन और आय में वृद्धि होगी। सीमित सिंचाई सुविधाओं के साथ उन्नत उत्पादन प्रौद्योगिकी द्वारा गर्मी के मौसम, जब तापमान बहुत अधिक (42–48 डिग्री सेल्सियस) होता है और मई और जून के महीनों में अजैविक तनाव की स्थिति में भी सफलतापुर्वक की जा सकती है। शुष्क क्षेत्र में उपरोक्त उत्पादन तकनीक अपनाकर बुवाई के 50–55 दिनों में ही ''थार समृद्धि'' की फसल तुडाई के लिए तैयार हो जाती है और 200–300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की औसत पैदावार प्राप्त की जा सकती है जिससे किसान को प्रत्येक ऋतु में रू. 1.0–1.5 लाख रुपये प्रति हेक्टेयर तक सकल आय प्राप्त की जा सकती है।

लौकी का उत्पादन प्रक्षेत्र परिदृश्य

गोल लौकी फल

सावधानियाँ

- बीज उपचार, ड्रिप सिंचाई प्रणाली पर पंक्तिनुमा बुवाई, अधिकतम उपज प्राप्त करने हेतु फसल के महत्वपूर्ण चरणों के दोरान इष्टतम नमी बनाए रखना महत्वपूर्ण है।
- आवश्यकता आधारित कीटनाशकों का अनुप्रयोग करना चाहिये। कीटनाशकों का छिड़काव देर शाम के समय किया जाना चाहिए, ताकि मधुमक्खी द्वारा परागण की प्रक्रिया प्रभावित न हो।

प्रौद्योगिकी - 18 : धारीदार तोरई की उन्नत किस्म "थार करणी" उगायें

संस्तुत जलवायु क्षेत्र : शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

धारीदार तोरई एक बेलवाली सब्जी फसल है जिसके कच्चे फलों का उपयोग सब्जी के लिए किया जाता है। इसका उत्पादन गर्मी एवं वर्षा दोनों ही ऋतुओं में सफलतापूर्वक किया जा सकता है। इसकी अच्छी उपज के लिये गर्म मौसम तथा औसतन तापमान 25–27° सेल्सियस उत्तम रहता है। अंकुरण व पौधों की बढ़वार के लिए 25–30° सेल्सियस उपयुक्त होता है। पुष्पन व फलन के दौरान अत्यधिक गर्मी अथवा वर्षा होने पर उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। पहले, गर्म शुष्क क्षेत्र जैसे पश्चिमी राजस्थान में धारीदार तोरई की फसल बहुत कम होती थी परन्तु, हाल ही में भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर ने धारीदार तोरई की नई उन्नत किस्म "थार करणी" व उसे सफलतापूर्वक उगाने की तकनीकी विकसित की है जिससे धारीदार तोरई को शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्र उगाने के प्रचार– प्रसार को बल मिल रहा है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, प्रमुख विशेषताएं एवं लाभ

भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकनेर ने अपने शोध द्वारा धारीदार तोरई की विकसित उन्नत किस्म "थार करणी" की खेती, गर्म शुष्क क्षेत्र में गर्मी एवं वर्षा दोनों ऋतुओं में सफलतापूर्वक की जा रही और गर्म शुष्क क्षेत्र कें किसानों के लिये बहुत ही लाभदायक सिद्ध हो रही है। इसकी खेती के लिए बलुई दोमट मृदा उत्तम रहती है। इसकी खेती की तैयारी के लिए, पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से तथा इसके बाद 2–3 जुताई कल्टीवेटर से करनी चाहिए। फसल को दीमक व अन्य कीड़ों से बचाने के लिये मेलाथियान (5 प्रतिशत) को 20–25 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से अंतिम जुताई के समय, पाटा लगाने से पहले खेत में भुरककर मिला देनी चाहिए। "थार करणी" की बुवाई के लिए प्रति हेक्टेयर 2.0–2.5 किलोग्राम बीज पर्याप्त होता है। बुवाई करने से पूर्व बीजों को केप्टान या थिरम नामक फफूंदनाशी दवा (2 ग्राम प्रति किग्रा बीज) से उपचारित करना चाहिए। ग्रीष्म ऋतु की फसल के लिए 15 फरवरी से मार्च का प्रथम सप्ताह तथा वर्षा ऋतु की फसल के लिए जुलाई के मध्य से अगस्त के मध्य तक बुवाई करनी चाहिए। ग्रीष्मकाल में अगेती फसल प्राप्त करने के लिए दिसम्बर के अंतिम सप्ताह में लो टनल में बुवाई करनी चाहिए। दिसम्बर में तापमान कम रहने से अंकुरण देरी से होता है अतः शीघ्र अंकुरण के लिए बुवाई से पूर्व बीजों को 20 से 24 घंटे तक पानी में भिगोना चाहिए तथा इसके पश्चात् टाट की बोरी के टुकड़े में लपेट कर किसी गर्म जगह पर रखना चाहिए। धारीदार तोरई की खेती ड्रिप प्रणाली (4 लीटर प्रति घण्टा वाले इन लाइन ड्रिपर) से करनी चाहिए। ड्रिप प्रणाली में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 1.5–2.0 मीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 50 सेमी रखनी चाहिए। एक ड्रिपर के पास 2–3 बीजों को 1–2 सेमी की गहराई पर बोना चाहिए। सिंचाई बूँद–बूँद प्रणाली से 2–3 दिन के अन्तराल पर 2–3 घण्टे सिंचाई करनी चाहिए।

खेत की अन्तिम जुताई के समय 25 से 30 टन सड़ी–गली गोबर की खाद तथ नत्रजन, फास्फोरस एवं पोटाश की मात्रा क्रमशः 80:60:60 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से देनी उत्तम पाय गया। नत्रजन की एक तिहाई तथा फास्फोरस व पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा अन्तिम जुताई के समय देनी चाहिए। नत्रजन की शेष मात्रा को दो समान भागों में बांटकर बुवाई के 25 से 30 तथा 45 से 50 दिनों के बाद खड़ी फसल में छिटक देनी चाहिए। इसके अतिरिक्त पौधों में लता बनने व पुष्पन के समय जल में घुलनशील एन. पी. के. 19:19:19 की 8–10 किलोग्राम मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बूंद–बूंद सिंचाई माध्यम से देने पर उपज में वृद्धि होती है। गुणवत्तायुक्त उपज प्राप्त करने के लिए पुष्पन व फलत के समय सूक्ष्म तत्वों का पर्णीय छिड़काव (5–6 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से) करना लाभदायक होता है। खेत को खरपतवार मुक्त रखने के लिए समय–समय पर निराई–गुड़ाई करके खरपतवारों को निकालते रहना चाहिए। वर्षा ऋतु में मल्च का उपयोग करने से खरपतवारों का नियन्त्रण आसानी से किया जा सकता है।

फलों की तुड़ाई कच्ची तथा मुलायम अवस्था में करनी चाहिए। सामान्य परिस्थितियों में मादा फूल खिलने के 6–8 दिन बाद वह फल सब्जी योग्य हो जाता है। फलों की तुड़ाई 2–3 दिन के अन्तराल पर सुबह के समय करनी चाहिए। शुष्क क्षेत्रों में धारीदार तोरई के सब्जी योग्य ताजा फलों की उपज सामान्यतः 130–150 क्विंटल प्रति हेक्टेयर प्राप्त की जा सकती है। कीट एवं व्याधि प्रबंधन के लिए एकीकृत प्रबंधन की विधियों को अपनाना चाहिए। फल मक्खी के नियन्त्रण हेतु खेत में पुष्पन शुरू होने से अन्तिम तुड़ाई तक 20–25 क्यू–आकर्षण ट्रैप प्रति हेक्टेयर लगाना चाहिए। चेपा, सफेद मक्खी तथा लीफ माइनर के नियन्त्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल या थायोमिथोक्जाम 70 डब्लू एस (0.3–0.5 मिली/लीटर पानी) का आवश्यकतानुसार छिड़काव करना चाहिए। फल मक्खी, कद्दू का लाल कीड़ा, पत्ती भेदक सुंडी तथा हाडा बीटल की रोकथाम के लिए डाइमीथोएट 30 ई सी या मेलाथियान

धारीदार तोरई की उन्नत किस्म थार करणी की फसल तथा फल

50 ई सी (1.5–2.0 मिली/लीटर पानी) या स्पाईनोसेड 45 एस सी (0.5–0.7 मिली/लीटर पानी) का आवश्यकता होने पर ही छिड़काव करना चाहिए। माइट का प्रकोप होने पर प्रोपारजाइट (2.0 मिली/लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए। मृदुरोमिल आसिता बीमारी के नियन्त्रण हेतु खड़ी फसल पर मैन्कोजेब या रिडोमिल एम जेड–72 का 2 ग्राम/लीटर पानी की दर से घोलकर छिड़काव करना चाहिए। चुर्णिल आसिता का प्रकोप होने पर गंधक के चूर्ण का 25–30 किग्रा/हेक्टेयर के हिसाब से भुरकाव करना चाहिए। फल विगलन से बचाव के लिए खड़ी फसल में बाविस्टीन (2.5 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव करना चाहिए। श्यामवर्ण (एन्थ्रेक्नोज) की रोकथाम हेतु मैन्कोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (2–3 ग्राम/लीटर पानी) का छिड़काव आवश्यकतानुसार करना चाहिए। उकठा रोग का प्रकोप दिखाई देने पर खड़ी फसल में बाविस्टीन (2 ग्राम/लीटर पानी) को पौधों की जड़ों के पास डालना (ड्रेन्चिंग) चाहिए। उपरोक्त तकनीक को अपनाकर धारीदार तोरई की उन्नत किस्म "थार करणी" की प्रति हेक्टेयर फसल से लगभग 1.20–1.40 लाख रुपये तक शुद्ध आय प्राप्त की जा सकती है।

सावधानियाँ

- फसल की आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए।
- कीट एवं बीमारियों का समय से प्रबंधन करना चाहिए। कीटनाशकों का छिड़काव शाम के समय करना चाहिए जब मधुमक्खियों की गतिविधि रुक जावे।
- रासायनिक कीटनाशकों या दवाओं के छिड़काव के 5–7 दिन बाद तक फलों की तुड़ाई नही करना चाहिए।
- ग्रीष्म ऋतु में तापमान के बढ़ने पर बेलों के नीचे घास फूस बिछा देना चाहिए ताकि बेलों का विकास रुके नहीं।
- फलों को किसी धारदार चाकू से काटना चाहिए, ताकि पौधों को नुकसान न हो।
- नरम व चिकने फलों को सुबह के समय तोड़ना चाहिए तथा ग्रेडिंग करके बाजार में भेजना चाहिए।

प्रौद्योगिकी - 19 : तर-ककड़ी की उन्नत किस्म-थार शीतल

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

तर–ककड़ी (कुकुमिस मेलो किस्म यूटिलिसीमस) जायद की एक प्रमुख नकदी फसल है। इसके फल लम्बे व हल्के हरे रंग के होते हैं। फल में शीतलन प्रभाव होता है इसलिए यह मुख्य रूप से गर्मी के मौसम में उगाई जाती है। पश्चिमी राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्र में पहले तर–ककड़ी की फसल बहुत कम होती थी परंतु, हाल ही में भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर ने तर–ककड़ी उगाने की नई तकनीकी विकसित की है तथा अब गर्म शुष्क क्षेत्र में तर–ककड़ी के उत्पादन व उसके प्रचार–प्रसार को बढ़ावा मिल रहा है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, प्रमुख विशेषताएं एवं लाभ

हाल ही में भाकृअनुप–केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर (रजस्थान) ने अपने शोधकर्यो से तर–ककड़ी की एक नई उन्नत किस्म ''थार शीतल'' का विकास किया है जो शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्र के किसानो की आय के लिए एक वरदान सिद्ध हो रही है। ''थार शीतल'' तर ककड़ी की अगेती किस्म है इसके फलों की प्रथम तुड़ाई, बुवाई के 45–50 दिन बाद ही शुरु हो जाती है। यह ड्रिप सिंचाई प्रणाली पर बहुत कम पानी व कम खर्च के साथ अल्पसमय में भरपूर उत्पादन देना शुरु कर देती है। ड्रिप सिंचाई प्रणाली से खेती करने पर एक हेक्टेयर क्षेत्रफल के लिए 1.0–1.2 किलोग्राम बीज की आवश्यकता पड़ती है। बुवाई से पूर्व बीज को केप्टान या थिरम (2 ग्राम/किग्रा बीज) से उपचारित करना चाहिए। ग्रीष्मकालीन फसल के लिए, ''थार शीतल'' की बुवाई 15–25 फरवरी के मध्य करनी चाहिए। इसकी ग्रीष्मकाल में अगेती फसल प्राप्त करने के लिए दिसम्बर के अंतिम सप्ताह में लो टनल में बुवाई करनी चाहिए। दिसम्बर में तापमान कम रहने से अंकुरण देरी से होता है अतः शीघ्र अंकुरण के लिए बोने से पहले बीजों को 12 घण्टे तक पानी में भिगोना चाहिए तथा इसके पश्चात् टाट की बोरी के टुकड़े में लपेट कर किसी गर्म जगह पर रखना चाहिए। ''थार शीतल'' की वर्षाकालीन फसल के लिए बुवाई मध्य जुलाई से मध्य अगस्त तक करनी चाहिए। ड्रिप प्रणाली में पंक्ति से पंक्ति की दूरी 1.5–2.0 मीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 50 सेमी रखनी चाहिए। खेत में 200–250 क्विंटल अच्छी प्रकार से सड़ी हुई गोबर की खाद या कम्पोस्ट डालना चाहिये। इसके अतिरिक्त उर्वरक के रूप में 50–60 किलोग्राम नत्रजन, 60–80 किलोग्राम फास्फोरस तथा 50–60 किलोग्राम पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में डालना चाहिये। प्रत्येक ड्रिपर के पास 2–3 बीजों को 1–2 सेमी की गहराई पर बोना चाहिए। पौधों में लता बनने व पुष्पन के समय जल में घुलनशील एन.पी.के. 19:19:19 की 8–10 किलोग्राम मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से बूंद–बूंद सिंचाई के माध्यम से देने पर उपज में वृद्धि होती है। शुष्क क्षेत्रीय जलवायु में तर–ककड़ी की उन्नत किस्म ''थार शीतल'' की खेती के लिए सिंचाई की बूंद–बूंद तकनीक (4 लीटर प्रति घण्टा वाले इन लाइन ड्रिपर) सर्वोत्तम रहती है। सिंचाई की ड्रिप प्रणाली के उपयोग से लगभग 40–50% पानी की बचत होती

है तथा फर्टिगेसन व फफूंदनाशकों की ड्रेंचिंग भी आसानी की जा सकती है। ड्रिप प्रणाली अपनाने से बीज की मात्रा तथा श्रम की भी बचत होती है। खरपतवारों के नियंत्रण के लिए मल्च का उपयोग करना चाहिए। तर–ककड़ी की बुवाई दिसम्बर–जनवरी माह में टनल तकनीक से करने पर 40–50 दिन अगेती फसल ली जा सकती है जिसका बाजार में भाव अधिक प्राप्त होता है। इस तकनीक का उपयोग करने से तर–ककड़ी का उत्पादन ग्रीष्मकाल में करके ज्यादा मुनाफा प्राप्त किया जा सकता है।

कीटों के एकीकृत प्रबंधन में सबसे प्रभावी तरीका खेत की सफाई करना होता है। तर–ककड़ी को मुख्यतः फल मक्खी, चितकबरी सुंडी, लाल कद्दू बीटल, हाडा बीटल आदि नुकसान पहुंचाते हैं। इनके नियन्त्रण हेतु एकीकृत प्रबन्धन की विधियाँ अपनाना चाहिए। फल मक्खी के नियन्त्रण हेतु खेत में पुष्पन शुरू होने से अन्तिम तुड़ाई तक 20–25 क्यू–आकर्षण ट्रैप प्रति हेक्टेयर लगाना चाहिए। चेपा, सफेद मक्खी तथा लीफ माइनर के नियन्त्रण के लिए इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस एल या थायोमिथोक्जाम 70 ड्ब्लू एस (0.3–0.5 मिली/लीटर) का आवश्यकतानुसार छिड़काव करना चाहिए। फल मक्खी, कद्दू का लाल कीड़ा, पत्ती भेदक सुंडी तथा हाडा बीटल की रोकथाम के लिए डाइमीथोएट 30 ई सी या मेलाथियान 50 ई सी (1.5–2.0 मिली/लीटर) या स्पाईनोसेड 45 एस सी (0.5–0.7 मिली/लीटर) का आवश्यकता होने पर ही छिड़काव करना चाहिए।

तर–ककड़ी में मृदुरोमिल आसिता, चुर्णिल आसिता, फल विगलन, श्यामवर्ण (एन्थ्रेक्नोज) तथा उकठा रोग (विल्ट) बीमारियाँ लगती हैं। बीज को केप्टान या थिरम (2 ग्राम/किग्रा) से उपचारित करके बोना चाहिए। मृदुरोमिल आसिता के नियन्त्रण हेतु खड़ी फसल पर मैन्कोजेब या रिडोमिल एम जेड–72 का 2 ग्राम/लीटर की दर से घोलकर छिड़काव करना चाहिए। चुर्णिल आसिता का प्रकोप होने पर गंधक के चूर्ण का 25–30 किग्रा/हेक्टेयर के हिसाब से बार भुरकाव करना चाहिए। फल विगलन से बचाव के लिए खड़ी फसल में बाविस्टीन (2.5 ग्राम/लीटर) का छिड़काव करना चाहिए। श्यामवर्ण (एन्थ्रेक्नोज) की रोकथाम हेतु मैन्कोजेब या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (2–3 ग्राम/लीटर) का छिड़काव आवश्यकतानुसार करना चाहिए। उकठा रोग का प्रकोप दिखाई देने पर खड़ी फसल में बाविस्टीन (2 ग्राम/लीटर) को पौधों की जड़ों के पास डालना (ड्रेन्चिंग) चाहिए।

मल्च व ड्रिप से तर–ककड़ी का उत्पादन

लो–टनल तकनीक से तर–ककड़ी का उत्पादन

ग्रीष्मकाल में लहलहाती थार शीतल

तर–ककड़ी उगाने की इन उन्नत तकनिकियों को अपनाकर शुष्क क्षेत्रों में गर्मी के मौसम में उच्च तापमान (42° सेल्सियस) पर भी तर–ककड़ी किस्म (थार शीतल) की औसत उपज 130–140 क्विंटल/हेक्टेयर तथा 1.3–1.5 लाख रुपये/हेक्टेयर/सीजन में शुद्ध आय प्राप्त की जा सकती है।

सावधानियां

- कीट एवं बीमारियों का समय से प्रबंधन करना चाहिए।
- कीटनाशकों का छिड़काव फलों की तुड़ाई करने के बाद शाम के समय मधुमक्खियों की गतिविधि रुकने पर ही करना चाहिए।
- नरम व चिकने फलों को सुबह अथवा शाम के समय तोड़ना चाहिए।
- तुड़ाई के समय फलों की लम्बाई 20–30 सेमी होनी चाहिए।
- तुड़ाई के बाद फलों की ग्रेडिंग करके बाजार में भेजना चाहिए।

प्रौद्योगिकी -20 : ग्वार फली की उन्नत किस्म-थार भादवी

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

सब्जी वाली ग्वार फली एक दलहनी कुल का पौधा है। जिसका वानस्पतिक नाम साईनोप्सिस टेट्रोगोनोलोबा है। ये फसल मुख्य रूप से बीज उत्पादन के लिए उगाई जाती है। परंतु गर्म शुष्क क्षेत्र के लोग इसकी मुलायम व कच्ची फलियों का उपयोग सब्जी बनाने के रूप में उपयोग करतें है। अभी तक गर्म शुष्क क्षेत्र के अजैविक तनावों के तहत सब्जी वाली ग्वार फली की खेती के लिए किसी विशेष किस्म का विकास नहीं किया गया था। किस्में जैसे एम–83, दुर्गा बहार और पूसा नवबहार आदि पश्चिमी राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्र में बारिश या सीमित जल उपलब्धता के तहत अच्छा प्रदर्शन नहीं कर रही थीं। फली की गुणवत्ता भी उपभोक्ताओं द्वारा पसंद नहीं की जाती थी, जिससे किसानों को उनके उपज का दाम कम मिलता था। उपरोक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुये, भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर ने सब्जी वाली ग्वार की फलियों के लिए एक विशेष प्रकार की उन्नत किस्म 'थार भादवी' का विकास किया है जिसे देश के गर्म शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्र में वर्ष में दो बार (फरवरी–मार्च व जून–जुलाई) में सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। यह सब्जी उपयोग हेतु उच्च गुणवत्ता की पतली और मध्यम लंबी फली उत्पादित करती है और शुष्क क्षेत्र (250–350 मिमी/लीटर) में वर्षा आधारित खेती के लिये भी उपयुक्त है। साथ ही सिंचित क्षेत्र में भी उच्च पैदावार देने की क्षमता रखती है। फसल उत्पादन की विभिन्न परिस्थितियों में पौधे 75–145 सेमी की ऊंचाई प्राप्त कर सकते हैं। पुष्पण एवं फलन पौधे के आधार से 2–3 नोड्स पर शुरू हो जाता है। पुष्पण एवं फलन में आने वाली नोड्स की संख्या 22 तक जाती है। यह किस्म वसंत–गर्मी और बरसात दोनों मौसम की फसल में बुवाई के लिए उपयुक्त है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं व लाभ

यह किस्म अल्प अवधि में अगेती फसल देने वाली है। यह अत्यधिक ताप एवं सूखा सहन करने की क्षमता रखती है। इस किस्म को किसान वर्ष में दो बार (फरवरी–मार्च व जून–जुलाई) आसानी से उगा सकता है। बरसात के मौसम की फसल के रूप में बुवाई जून से जुलाई के अंत तक मानसूनी बारिश की शुरुआत के साथ की जा सकती है व फली की तुड़ाई की अवधि अगस्त–अक्टूबर तक होती है। सिंचित वसंत–ग्रीष्म ऋतु की फसल के लिए बुवाई फरवरी के दूसरे सप्ताह में पूरी कर लेनी चाहिए। यदि इसे पंक्तियों में उगाने के लिए 14 से 16 किलो ग्राम बीज ही पर्याप्त होता है। जुलाई में मानसून की शुरुआत के साथ बोई गई फसल में 45–50 दिनों में फूल आने लगते हैं और पहली तुड़ाई 55 दिनों बाद शुरु हो जाती है जो कि अगस्त से अक्टूबर अंत तक जारी रहती है। विपणन योग्य अवस्था में हल्के हरे रंग की कोमल फली 6–8 सेमी लंबी होती है। सामान्य परिस्थिति के तहत फली उपज की क्षमता प्रति पौध 60 से 80 ग्राम तक होती है, जबकि सीमित सिंचाई वाले क्षेत्र में फली उपज 115 से 210 ग्राम तक होती है। शुष्क क्षेत्र में फसल उत्पादन की अनुशंसित तकनीक को अपनाकर फसल उत्पादन की विभिन्न स्थिति के तहत 65–125 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की फली उपज क्षमता होती है। यह किस्म पश्चिमी राजस्थान के

ग्वार फली की उन्नत किस्म थार भादवी की फसल तथा फल

शुष्क क्षेत्र में वर्षा ऋतु की फसल के रूप में सूखा और उच्च तापमान को सहन करने की क्षमता रखती है। उच्च तापमान सहिष्णु होने के फलस्वरूप, अनुशंसित उत्पादन प्रौद्योगिकी के साथ 'थार भादवी' किस्म की वर्षा एवं ग्रीष्मकालीन खेती से उत्तर–पश्चिमी भारत के अर्ध–शुष्क क्षेत्र विशेषकर राजस्थान में इस का उत्पादन से किसानों की आय में वृद्धि हो रही है। शुष्क क्षेत्रों के लिए सब्जी वाली ग्वार की कोई अन्य किस्म नहीं है जो "थार भादवी" से अधिक उपज दे सके। ग्वार फली की इस किस्म की मुलायम फलियों को सब्जी के लिए बेचकर किसान अच्छा धन–लाभ कमा रहे हैं। इस किस्म को उगाकर प्रति हेक्टेयर/सीजन रुपये 1.30–1.60 लाख तक की आय अर्जित कर रहे हैं।

सावधानियाँ

- बीज उपचार, समय पर बुवाई, निराई–गुड़ाई, फली की नियमित अंतराल पर तुड़ाई और कीटनाशकों का आवश्यकता आधारित अनुप्रयोग।
- फसल को ग्रीष्म ऋतु (फरवरी बुवाई) में सिंचित फसल के रूप में उच्च पैदावार के लिए 2–3 जीवनदायी सिंचाई अवश्य करें।

प्रौद्योगिकी - 21 : उत्तर पश्चिमी राजस्थान में आलू उत्पादन की उन्नत तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायु : सिंचित गर्म शुष्क एवं अर्ध शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

सब्जियों में आलू का प्रमुख स्थान है। आलू की खेती प्रमुख रूप से शीतोष्ण जलवायु एवं हल्की दोमट मिट्टी में की जाती है। पश्चिमी राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों में पहले आलू की खेती न के बराबर होती थी लेकिन भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय शुष्क बागवानी संस्थान, बीकानेर ने भा.कृ.अनु.प.–केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला के साथ मिलकर हाल ही में किए गए शोध करके यह सिद्ध कर दिया है कि आलू की खेती को गैर–परम्परागत क्षेत्रों में जैसे उत्तर पश्चिमी राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों में जहाँ तापमान बहुत अधिक से न्यूनतम (48ºC से–04ºC) रहता है वहाँ पर भी आलू को आसानी से उगाया जा सकता है और इसकी खेती से अच्छा धन–लाभ कमाया जा सकता है। यह भी सिद्ध हो गया है कि उत्तर पश्चिमी राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों में अच्छी पैदावार के साथ–साथ आलू में अधिक शुष्क पदार्थ भी बनता है, क्योंकि यहाँ सर्दी के दिनों में धूप व आसमान खुला रहने की वजह से अधिक प्रकाश संश्लेषण होता है और यहाँ की मिट्टी बलुई होने के कारण आलू का आकार में किसी भी तरह की रुकावट नहीं आती है, जिसके कारण आलू के कंद भी बड़े बनते हैं। परम्परागत क्षेत्रों की तुलना में आलू के कंदों का आकार बड़ा, देखने में बहुत ही सुंदर, सुनहरा–सफेद रंग के होते हैं तथा शुष्क पदार्थ की मात्रा ज्यादा बनने के कारण इस तरह के आलू प्रसंस्करण व खाद्य के लिए सर्वोत्तम माना जाता है। संस्थान ने आलू की विभिन्न उन्नत किस्मों पर शोध कर पाया है कि इनकी बुवाई व सिंचाई की विधि, जल एवं पोषक तत्व प्रबंधन, न्यून तापक्रम से बचाव इत्यादि की तकनीकी में अनुकूल परिवर्तन करके गर्म शुष्क क्षेत्रों की जलवायु जैसे पश्चिमी राजस्थान में भी आलू किस्मों की खेती कई मापदंडों में परम्परागत क्षेत्रों की तुलना में अधिक अच्छी होती है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

संस्थान में किए गए अनुसंधान के आधार पर पाया गया कि गर्म शुष्क क्षेत्रों में सफलतापूर्वक आलू की खेती करने के लिए इसकी उन्नत किस्में जैसेः कुफरी चिपसोना–4, कुफरी फ्राईसोना, कुफरी गरिमा, कुफरी सूर्या, कुफरी बादशाह आदि उपयुक्त हैं। इन क्षेत्रों में आलू की बुवाई अक्टूबर के द्वितीय सप्ताह से नवम्बर माह के द्वितीय सप्ताह में करनी चाहिए। इनकी बुवाई के लिए आलू बीज का आकार के अनुसार 25–35 क्विंटल/हे. पर्याप्त रहता है। बुवाई करने के लिए पहले खेत में 50–60 सेमी दूरी पर 15 सेमी ऊँची मेड़ (डोलियाँ) बनाकर 15–20 सेमी की दूरी व 5–7 सेमी की गहराई पर बीज (कन्द) की बुवाई करके हल्की सिंचाई करनी चाहिए। शुष्क क्षेत्रों में आलू की खेती बूंद–बूंद सिंचाई विधि के साथ करना सर्वोत्तम पायी गई। पारंपरिक सिंचाई की अपेक्षा टपक (बूंद–बूंद) सिंचाई के साथ उर्वरकीकरण से पौधें में, पत्ती क्षेत्र तथा पत्तियों की संख्या में सार्थक वृद्धि हुई। टपक सिंचाई के अंतर्गत पौधे की अधिक वृद्धि

दर का मुख्य कारण पौधों की वृद्धि काल के दौरान टपक सिंचाई से मृदा का अधिक तापमान कम हो जाता है तथा न्यूनतम तापमान बढ़ जाता है जो की पौधे की वृद्धि एवं कंदों के बनने तथा बढ़ने के लिए उपयुक्त रहता है। टपक सिंचाई के साथ साथ उर्वर्कीकरण की जा सकती है। फव्वारा विधि में आलू के पौधों की पत्तियों पर पानी की बूँदों के पड़ने पर उन पर जमी धूल साफ होती है जिसकी वजह से कीड़ों को प्रकोप कम रहता है और पत्ती द्वारा अधिक प्रकाश संश्लेषण होता है और उपज अच्छी प्राप्त की जा सकती है। लेकिन फव्वारा विधि से सिंचाई के पानी की गुणवत्ता अच्छी होनी चाहिए, ताकि पत्तियों में जलने की समस्याएं ना आ सके। पारंपरिक सिंचाई की विधि की तुलना में बूंद–बूंद सिंचाई पर आलू की खेती उपज 30–35 प्रतिशत अधिक, 25–30 प्रतिशत उर्वरक तथा 40–50 प्रतिशत सिंचाई जल की बचत होती है।

फसल को पाले से बचाने के लिए सूक्ष्म फव्वारा भी चलाना कारगर होता है। कंद की बुवाई से 30–35 दिन बाद जब पौधें 8–10 सेमी ऊँचाई के हो जाएँ तो खरपतवार निकालकर पौधों पर मिट्टी चढ़ा दें। यह प्रक्रिया एक माह बाद फिर से दोहराएं। फसल की बुवाई से एक माह पूर्व 15–20 टन गोबर की खाद प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में अच्छी तरह मिला देनी चाहिए। इसके अलावा 200–100–100 किग्रा. एन.पी.के. प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा व नाइट्रोजन की एक–तिहाई मात्रा आलू बिजाई के समय डालनी चाहिऐ, बची हुई नाइट्रोजन की मात्रा दो बार डालनी चाहिऐ (मिट्टी चढ़ाते समय व आलू का आकार बढ़ने के समय) कीट व व्याधि के नियंत्रण के लिए समेकित कीट–व्याधि प्रबंधन सर्वोत्तम रहता है।

गर्म शुष्क क्षेत्र में अधिकतम औसत उपज कूफरी फ्राईसोना एवं कुफरी चिपसोना–4 (350–450 क्वि./हे.) जो प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त पायी गई और कुफरी गरिमा (250–350 क्वि./हे.) कुफरी सूर्या, कुफरी बादशाह इत्यादि, खाद्य आलू के लिए उपयुक्त पायी गई। उपरोक्त किस्मों से गर्म शुष्क क्षेत्रों में प्रति हेक्टेयर 80,000 से 1,40,000 रुपये की शुद्ध आय ली जा सकती है।

सावधानियाँ

- आलू की खुदाई करने से 7–10 दिन पहले आलू के पौधे का तना व पत्ती को काट देना चाहिए और सिंचाई बंद कर दें ताकि आलू की खुदाई के समय आलू की बाहरी सतह कठोर हो सकें।
- राजस्थान के गर्म शुष्क क्षेत्रों जैसे पश्चिमी राजस्थान में सर्दी के मौसम में पाला पड़ने की अधिक संभावना रहती है। इससे फसल को बचाने के लिए हल्की सिंचाई करने के साथ साथ रात के समय में घास–फूस/कूड़े कचरे को जलाकर धुआँ करते रहना चाहिए।
- आलू कंद को अधिक समय तक खेत में नहीं छोड़ना चाहिए और उनकी समय पर खुदाई कर लेनी चाहिए अन्यथा तापक्रम बढ़ने के कारण आलू कंद खराब हो सकते हैं।

शुष्क क्षेत्रों में आलू उत्पादन

प्रौद्योगिकी-22 : प्याज उत्पादन की उन्नत तकनीक

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क एवं अर्ध-शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

गर्म शुष्क क्षेत्र में गर्मियों के दौरान उच्च तापमान रहता है, लेकिन शीत ऋतु में अत्यधिक सर्दी का भी वातावरण होता है। इसके अलावा, इस क्षेत्र की मिट्टी रेतीली प्रकृति की है उपरोक्त दोनों परिस्थितियाँ कंद फसलों की खेती के लिए अनुकूल मानी जाती हैं। प्याज एक ऐसी ही कंद वाली फसल है और राजस्थान हाल के वर्षों के दौरान एक महत्वपूर्ण प्याज उत्पादक राज्य के रूप में उभरा है। इस प्रकार उच्च उपज वाली उपयुक्त किस्मों की पहचान करना और गर्म शुष्क परिस्थितियों के लिए इसकी उत्पादन तकनीक का मानकीकरण करना महत्वपूर्ण हो जाता है। शुष्क क्षेत्र में, रबी सीजन के लिए बीज की बुवाई सितंबर–अक्टूबर के दौरान और रोपाई नवंबर–दिसम्बर के दौरान की जानी चाहिये। पौधशाला (नर्सरी) तैयार करने हेतु 3–4 किलोग्राम अच्छी तरह सड़ी गोबर की खाद या 1 किग्रा वर्मी कम्पोस्ट प्रति वर्गमीटर की दर से बीज की क्यारी में मिलायें। क्यारी की मिट्टी को वीटावैक्स (2–3 ग्राम/ली.) या फॉर्मलाडीहाइड (2 मिली/ली) के साथ उपचारित करने के बाद 5–7 दिनों के लिए पॉलीथीन शीट से ढंक दिया जाता है। बीज बोने से पहले बीज को फफूंदनाशक जैसे वीटावैक्स (2.0 ग्राम/किग्रा) या ट्राइकोडर्मा (4–6 ग्राम/किग्रा) बीज की दर से उपचारित करना चाहिए। मिट्टी और बीज उपचार की यह विधि बीज और मिट्टी जनित रोगों को कम करने में मदद करती है। बीज को 5–7 सेंटीमीटर की दूरी पर बनाई गई कतार में बोना चाहिए। बुवाई के बाद बीज को गोबर की खाद या मिट्टी से ढक दिया जाता है। अच्छे बीज अंकुरण हेतु बीज क्यारी को पुआल या अन्य पलवार सामग्री से ढंका जा सकता है। बुवाई के तुरंत बाद हजारे द्वारा पानी दिया जाता है। बुवाई के 6–8 सप्ताह पश्चात पौध रोपाई के लिए तैयार हो जाते हैं। खेत की तैयारी के समय गोबर की खाद (15–20 टन/हेक्टेयर) या वर्मीकंपोस्ट (3–4 टन/हेक्टेयर) की दर से खेत में अच्छी तरह मिलाना चाहिये। प्याज की खेती के लिये रासायनिक उर्वरकों में 110 किलोग्राम नाइट्रोजन, 40 किलोग्राम फॉस्फोरस, 60 किलोग्राम पोटाश व 20 किलो सल्फर प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिये। नाइट्रोजन की 40 किलो मात्रा तथा फॉस्फोरस, पोटाश व सल्फर की पूरी मात्रा रोपाई से पहले खेत की तैयारी के समय दें। नाइट्रोजन की शेष मात्रा (70 किलो) को यूरिया के रूप में दो भागो में बाँटकर फसल रोपाई के 30 और 45 दिनों बाद देना सर्वाधिक उपयुक्त पाया गया है। रोपाई के लिए, भूमि की दो से तीन बार जुताई करके भूमि को समतल और मिट्टी को भुरभुरा किया जाता है। इसके पश्चात खेत को सिंचाई के लिए सुविधाजनक आकारों के छोटे–छोटे भूखंडों में विभाजित किया जाता है और समान रूप से कंद विकास सुनिश्चित करने के लिए पौधों की 15×10 सेमी की दूरी पर रोपाई की जाती है। शुष्क क्षेत्र में सीमित जल की उपलब्धता को देखते हुए प्याज की खेती ड्रिप सिंचाई के अंतर्गत चौड़ी क्यारियों में करना अधिक लाभदायक पाया गया है। शुष्क क्षेत्र में उपरोक्त उत्पादन तकनीक अपनाकर नवंबर–दिसम्बर के दौरान रोपी गई फसल मार्च–अप्रैल के दौरान खुदाई के लिये तैयार हो जाती है। जब प्याज के 50–75: पौधे सूखकर नीचे गिर जाये, जिसे नेक फाल भी कहते

हैं, तब कंद की खुदाई शुरू कर देनी चाहिए। खुदाई के बाद प्याज के डंठल को 2.5 सेमी छोड़कर एवं अच्छी तरह सुखा दें। इस प्रकार शुष्क क्षेत्र में उपयुक्त किस्म (भीमा रेड, भीमा किरण, भीमा शक्ति, आर.ओ.:252) व उन्नत उत्पादन तकनीकी को अपनाकर 200–400 क्विंटल प्रति हेक्टेयर की औसत कंद उपज प्राप्त की जा सकती है।

ड्रिप से शुष्क क्षेत्र में प्याज उत्पादन

प्याज को भण्डारण से पूर्व सुखाने की प्रक्रिया

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

उन्नत तकनीक से फसल बुवाई हेतु प्रति हेक्टेयर प्याज की रोपाई के लिये 8–10 किलो बीज पर्याप्त होता है। बीज को 5–7 सेंटीमीटर की दूरी पर बनाई गई कतार में बोना चाहिए। बुवाई के 6–8 सप्ताह पश्चात जब पौध लगभग 15 सेमी ऊंचाई और 0.8 सेमी तना व्यास के हो जाते हैं, रोपाई के लिए आदर्श होते हैं। रोपाई विधि प्याज की सिंचित फसल के लिए सबसे ज्यादा प्रचलित तरीका है क्योंकि इसके परिणामस्वरूप उच्च उपज और बड़े आकार के कंद मिलते हैं। शुष्क क्षेत्र में ड्रिप सिंचाई के अंतर्गत फसल की रोपाई हेतु, 15 सेंटीमीटर ऊंचाई वाली 120 से.मी. चौड़ी क्यारिया (ब्रॉड बेड फरो) बनाकर प्रत्येक क्यारी में 40 सेमी की दूरी पर तीन ड्रिप लेटरल बिछाई जाती हैं। दो इनबिल्ट एमिटर के बीच की दूरी लगभग 30–50 सेमी होती है और प्रत्येक ड्रिप लेटरल के दोनों तरफ 15 सेमी की दूरी पर पौधों की रोपाई की जानी चहिये। इस प्रकार एक क्यारी में प्याज की छह लाइनों की रोपाई की जा सकती है। पानी की आवश्यकता फसल की अवस्था के साथ बदलती जाती है। रोपाई के तुरंत बाद कम पानी की आवश्यकता होती है और फसल की वृद्धि के साथ बढ़ती जाती है। कंद की परिपक्वता से पहले अधिकतम पानी की आवश्यकता होती है और उसके बाद पुनः कम हो जाती है। पूरी फसल अवधि के दौरान दो बार हल्की निराई और गुड़ाई करनी चाहिए। अंकुरण और कंद का सड़ना प्याज के भंडारण में प्रमुख समस्याएं हैं क्योंकि कंद में पानी की मात्रा अधिक होती है। कंद की भंडारण अवधि को लंबा करने, त्वचा के रंग के समुचित विकास और प्रक्षेत्र की गर्मी को दूर करने के लिए कंद को पर्याप्त रूप से सुखाया जाना चाहिए। भंडारण से पहले कंद को खेत में या खुले छायादार स्थान में या कृत्रिम साधनों के द्वारा ठीक से सुखाया जाता है। रबी में, कंद को पत्ती सहित 3–5 दिनों के लिए खेत में ही सूखने के

लिए छोड़ दिया जाता है। खेत की गर्मी को दूर करने के लिए कंद के शीर्ष को काटते हुए 7–10 दिनों के लिए फिर से सुखाया जाता है। इस प्रकार सुखाये गये कंद को हवादार भंडार गृह में लम्बी अवधि के लिये रखा जा सकता है। अनुशंसित उत्पादन तकनीक के साथ उपयुक्त किस्मों को अपनाकर प्याज की खेती करने से राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों के किसानों के उत्पादन और अंततः आय में वृद्धि होगी। सीमित सिंचाई सुविधाओं के साथ, उपरोक्त उत्पादन प्रौद्योगिकी द्वारा प्याज की खेती करके गुणवत्तायुक्त उच्च कंद उपज प्राप्त की जा सकती है।

सावधानियाँ

- राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में प्याज की खेती हेतु उपयुक्त किस्म का चयन बहुत महत्वपूर्ण है।
- बीज उपचार, ड्रिप सिंचाई प्रणाली पर रोपाई और आवश्यकता आधारित कीटनाशकों के अनुप्रयोग की आवश्यकता होती है।
- उथली जड़ वाली फसल होने के कारण, गहरी अंतर–कर्षण क्रियाओं से जड़ों को नुकसान पहुंचने की संभावना रहती है।
- अतः पूरी फसल अवधि के दौरान दो बार हल्की निराई और गुड़ाई करनी चाहिए। कंद की खुदाई से 15 दिन पहले फसल में पानी देना बंद कर देना चाहिये।
- प्याज को भंडारित करने से पहले प्याज को अच्छी तरह सुखाया जाना चाहिए।

प्रौद्योगिकी -23 : कद्दूवर्गीय सब्जियों का लो-टनल तकनीक से अगेती उत्पादन

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क एवं अर्ध-शुष्क सहित समस्त मैदानी क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

लो–टनल को रो–कवर के रूप में भी जाना जाता है। यह कम लागत वाली छोटी संरचनाएं हैं, जो ग्रीनहाउस तरह का प्रभाव निर्माण करती हैं। प्लास्टिक शीट या गैर–बुने हुए कपड़े का एक लचीला पारदर्शी आवरण, सीधे बोए गए/प्रत्यारोपित सब्जियों की पंक्तियों या अलग–अलग क्यारी पर स्थापित किया जाता है। यह सर्दियों के मौसम के दौरान पौधों के चारों ओर हवा को गर्म करके और टनल के अंदर कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा में वृद्धि करके पौधों की प्रकाश संश्लेषण गतिविधियों को नियंत्रित करता है। सर्दियों मिट्टी का तापमान को गर्म करता है और पौधों के लिये आवश्यक तापमान को बनाये रखता है, जो अंकुरण व तीव्र विकास को प्रोत्साहित करता है। लो टनल के अंदर का तापमान बाहर के तापमान से लगभग 6 से 10 डिग्री सेल्सियस अधिक होता है। यह फसल को पाला व ठंडी हवा से भी बचाता है, इस प्रकार पौधों को सर्दियों के दौरान सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है और फसल को सामान्य मौसम की तुलना में 30 से 45 दिन पहले लिया जा सकता है। उदाहरण के लिए दिसंबर के तीसरे सप्ताह में बोई गई ककड़ी फसल की तुड़ाई फरवरी के अंतिम सप्ताह या मार्च के पहले सप्ताह में की जा सकती है। इसी तरह, अन्य कद्दूवर्गीय सब्जियों जैसे तरबूज, खरबूज, लौकी, टिंडा, छप्पन कद्दू आदि को लो टनल तकनीक द्वारा सामान्य मौसम की अपेक्षा 30–50 दिन पहले उगाया जा सकता है, जिससे बाजार में उत्पाद की उच्च कीमत मिलती है व किसान को अच्छा आर्थिक लाभ प्राप्त होता है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

दिसम्बर माह में खेत में फसल के अनुसार 2–2.5 मीटर की दूरी पर 45 सेमी चौड़ी तथा 45–60 सेमी गहरी नालियाँ पूर्व से पश्चिम दिशा में बनाते हैं। सिंचाई के लिए 2–4 लीटर/घण्टा पानी डिस्चार्ज वाले ड्रिपर की 12–16 मिमी आकार की ड्रिप पाईप (लेटरल) जिन पर 60 सेमी की दूरी पर इनलाइन ड्रिपर लगे हों, को नालियों में बिछा देना चाहिए। बुवाई करने से पूर्व बीजों का अंकुरण कराना आवश्यक है क्योंकि दिसम्बर–जनवरी माह में निम्न तापमान के कारण इनका अंकुरण देर से होता है। अतः अंकुरण के लिए बीजों को पानी में भिगोना चाहिए एवं बाद में बीज को केप्टान या बाविस्टीन (2 ग्राम दवा/किग्रा बीज) से उपचारित करना चाहिए। इन अंकुरित बीजों की बुवाई तैयार नालियों में दिसम्बर के अंतिम सप्ताह से जनवरी के प्रथम सप्ताह तक कर देनी चाहिए। एक ड्रिपर के पास कम से कम 2 बीजों की बुवाई करते हैं। नाली (ट्रेंच) के ऊपर अर्ध चंद्राकार जंग रोधी लोहे के तारों (2 मिमी मोटाई) को 3–4 मीटर की दूरी पर स्थापित करते हैं। इन तारों पर 25–50 माईक्रोन मोटी तथा 2 मीटर चौड़ी पारदर्शी प्लास्टिक की चादर बिछाकर इसकी लम्बाई वाले दोनों सिरों को मिट्टी में दबा दिया जाता है। इस प्रकार बोई गई फसल पर प्लास्टिक की एक लघु सुरंग बन जाती है। प्लास्टिक शीट दो उद्देश्यों

अगेती कद्दुवर्गीय सब्जियों के उत्पादन की लो–टनल तकनीक की संरचना का दृश्य

की पूर्ति करती हैः पहला, यह गर्मी को धारण पानी वाष्पन नुकसान को कम करती है और दूसरा, यह पौधों को प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियों से बचाती है। समय–समय पर प्लास्टिक को हटाकर फसल का निरीक्षण भी करते रहना चाहिए तथा कीट व बीमारी का प्रकोप होने पर उनका समुचित नियंत्रण भी करना चाहिए। इस विधि से बुआई करने पर फूल बनते समय वातावरण का तापमान बहुत अनुकूल रहता है जिससे मादा फूल अधिक आते हैं तथा उस समय परागण करने वाले कीट भी अधिक होने से फसल की पैदावार अच्छी होती है। इस लो टनल तकनीक के कई महत्वपूर्ण लाभ है जैसे कद्दूवर्गीय सब्जियों की अगेती और बेमौसम उत्पादन, पौधों का कम तापमान, ठंड व पाले आदि से बचाव, सामान्य मौसम की अपेक्षा 40–50 दिन अगेती फसल संभव जिससे गुणवत्तायुक्त उपज मिलती है तथा बाजार में इन सब्जियों का मूल्य भी अधिक प्राप्त होता है। इस तकनीक से कम लागत में अधिक आमदनी होती है जिससे 2.5–3.0 गुणा तक का लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

सावधानियाँ

जब पौधे फूलों का उत्पादन शुरू करते हैं, तो प्लास्टिक को दिन के समय आंशिक रूप से हटा दिया जाना चाहिए और रात के समय ढक देना चाहिए। फरवरी के दूसरे या तीसरे सप्ताह में जब वातावरण का तापमान बढ़ जाता है तथा कद्दूवर्गीय सब्जियों की बढ़वार के अनुकूल हो जाता है तो प्लास्टिक के आवरण को हटाकर खरपतवारों को निकाल देना चाहिए। किन्तु प्लास्टिक की टनल को कभी भी एकदम से नहीं हटाना चाहिए क्योंकि ऐसा करने से पौधों को धक्का लगता है तथा वे मुरझा जाते हैं जिससे उनकी वानस्पतिक वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः सबसे पहले टनल के दोनों छोर से प्लास्टिक को हटा देना चाहिए तथा इसके 2–3 दिन बाद प्लास्टिक को दिन में हटा देना चाहिए तथा शाम के समय पौधों को वापस प्लास्टिक से ढक देना चाहिए। यह प्रक्रिया 2–3 दिन तक करने से पौधों का कठोरीकरण हो जाता है तथा पौधे मौसम के अनुकूल ढल जाते हैं। पौधों की वानस्पतिक वृद्धि के दौरान कतारों के बीच सरकंडा का पलवार बिछा देना चाहिए जिससे पौधों का गर्म मिट्टी से बचाव होने के कारण बढ़वार अच्छी होती है।

प्रौद्योगिकी –24 : कद्दूवर्गीय सब्जियों में मोजेक रोग का समेकित प्रबंधन

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क और अर्ध-शुष्क जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती शुष्क एवं अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में सफलता पूर्वक की जाती है। इन सब्जियों को अधिकतर गर्मी और बरसात के मौसम में पश्चिमी राजस्थान में उगा सकते हैं। कद्दूवर्गीय सब्जियों में आल्टरनेरिया पत्ती झुलसा रोग, सरकोस्पोरा पत्ती धब्बा, चूर्णी आसिता रोग, श्यामवरण रोग, म्लानि (विल्ट) रोग और मोजेक रोग आदि बीमारियाँ पायी जाती हैं। इनमें से मोजेक रोग एक गंभीर बीमारी है। इसमें फल छोटे व विकृत हो जाने से किसानों को बाजार में फलों का भाव बहुत कम मिल पाता है। जिससे किसानों की आमदनी काफी कम हो जाती है। कद्दूवर्गीय सब्जियों में यह बीमारी मुख्यतः मतीरा (तरबूज), तोरई, खीरा, करेला व टिंडा आदि में ज्यादा देखी गयी है। मोजेक रोग से ग्रसित पौधे छोटे रह जाते हैं, पौधों की नयी पत्तियाँ छोटी तथा उन पर हल्के पीले रंग के धब्बे दिखते हैं। पत्तियाँ सिकुड़ कर मुड़ जाती है तथा एक पीला मौजेक या चित्तीदार क्रम दिखाई देता है जिससे हरिमाहीन (क्लोरोटिक) धब्बे दिखते हैं। फल भी छोटे व विकृत हो जाते हैं। मोजेक रोग कुकम्बर मोजेक वाइरस द्वारा होता है और यह रोग कीट वाहक (वेक्टर) के द्वारा फैलता है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

कद्दूवर्गीय सब्जियों में मोजेक रोग के प्रबंधन हेतु वर्ष 2018 तथा 2019 के प्रयोग में बरसात के मौसम के दौरान विभिन्न उपचार जैसे कीटनाशक तथा वनस्पतियों का अक्र आदि लिए गए। फसल की बुबाई से पहले प्रत्येक संबन्धित उपचार से बीज का उपचार/शोधन किया गया। इसके बाद प्रत्येक उपचार के तीन–तीन छिड़काव किए गए। 11 उपचारों में, इमिडाक्लोप्रिड (@ 0.05%) को 15.90% न्यूनतम मोजेक रोग सूचकांक (पीडीआई) और 61.69% प्रतिशत रोग में कमी (पीडीसी) के साथ सबसे प्रभावी तथा अच्छा पाया गया। इस उपचार के बाद अगला अच्छा उपचार नीम पत्ती का अक्र (@10%)

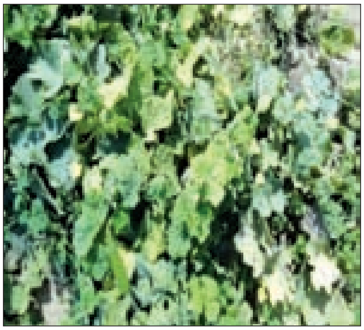

तोरई का मोजेक रोग

मतीरे का मोजेक रोग

19.34% रोग सूचकांक और 53.41% प्रतिशत रोग में कमी देखी गयी। इसके बाद तुंबा के फल का अर्क (@10%) और एनएसकेइ उपचार (@5%) इस रोग के खिलाफ प्रभावी पाए गए। अधिकतम मोजेक रोग सूचकांक (41.51%) नियंत्रण वाले उपचार (ट्रीटमेंट) में पाया गया। इस उपचार (ट्रीटमेंट) का छिड़काव करने से रोग बहुत कम हो जाता है जिससे फसल की उपज बढ़ जाती है और किसान अधिक मुनाफा कमा सकते हैं।

समेकित रोग प्रबंधन

- विषाणु एवं अन्य रोग मुक्त बीज का प्रयोग करना चाहिए।
- गर्मियों में खेत की गहरी जुताई जरूर करना चाहिए।
- प्रमाणित व शुद्ध बीज प्रयोग करें।
- बीज को बेविस्टीन/विटावेक्स (1–2 ग्राम/लीटर) से उपचारित करके ही बुबाई करना चाहिए।
- रोग ग्रसित पौधों को (कम संख्या पर) उखाड़कर जलाना चाहिए व जंगली खरपतवारों को नष्ट करना चाहिए। खेत में सफाई जरूर रखना चाहिए।
- खेत के चारों ओर मेड़ पर मुख्य सब्जी की बुबाई से 15–20 दिन पहले बाजरा या मक्का की फसल उगा दें, जिससे इस रोग के कीट वाहक (वेक्टर) खेत में कम से कम आ सके।
- रोग रोधी प्रजातियां उगाने से भी रोग को काफी कम किया जा सकता है।

सावधानियाँ

- सब्जी की बुबाई से 20–30 दिन बाद उपरोक्त उपचारों का छिड़काव करना चाहिए।
- रसायनों तथा अन्य का छिड़काव हमेशा सुबह या शाम को करना चाहिए।
- छिड़काव करते समय मुंह को कपड़े से जरूर ढकना चाहिए।
- रसायनों का छिड़काव हवा के विपरीत नहीं करना चाहिए।
- इमिडाक्लोप्रिड तथा अन्य बहुत प्रसिद्ध तथा अच्छी कम्पनी के ही प्रयोग में लाना चाहिए।
- कोई भी कवकनाशी, कीटनाशी तथा अन्य को खरीदने के समय समाप्ति (एक्सपाइरी) दिनांक जरूर देख लेना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-25 : कद्दूवर्गीय सब्जियों में पत्ती झुलसा रोग का समेकित प्रबंधन

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

कद्दूवर्गीय सब्जियों की खेती शुष्क एवं अर्ध शुष्क क्षेत्रों में सफलता पूर्वक की जाती है। इन सब्जियों को अधिकतर गर्मी और बरसात के मौसम में पश्चिमी राजस्थान में उगा सकते हैं। कद्दूवर्गीय सब्जियों में यह पत्ती झुलसा रोग आल्टरनेरिया कुकुमेरिना द्वारा होता है। पत्ती झुलसा रोग मुख्यतः लौकी, मतीरा (तरबूज), चिकनी तोरई, खीरा व कद्दू आदि में ज्यादा देखा गया है। इस रोग से ग्रसित पौधौ की पत्तियों की ऊपरी सतह पर हल्के भूरे रंग के धब्बे बनते हैं जो बाद में गहरे भूरे रंग के हो जाते हैं। ये धब्बे आपस में मिलकर पत्ती की सतह को काफी घेर लेते हैं व पत्तियों पर केन्द्रीयकृत गोले भी बन जाते हैं।

कद्दूवर्गीय सब्जियों में आल्टरनेरिया पत्ती झुलसा रोग, सरकोस्पोरा पत्ती धब्बा, चूर्णी आसिता रोग, मृदुरोमिल आसिता और श्यामवरण रोग आदि बीमारियाँ पायी जाती हैं। इनमें से आल्टरनेरिया पत्ती झुलसा रोग बहुत ही गंभीर रोग है। इस रोग के द्वारा कद्दूवर्गीय सब्जियों की उपज में काफी हानि होती है जिससे किसानों की आमदनी कम हो जाती है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

कद्दूवर्गीय सब्जियों में आल्टरनेरिया पत्ती झुलसा रोग के प्रबंधन का कार्य कवकनाशी, जैव–कारक और बोटेनिकल (वनस्पतियों का अक्र) के माध्यम से इस संस्थान में किया गया। इस रोग के प्रबंधन के लिए उपचार कार्बेण्डाजिम @0.1% (बीज उपचार) मेनकोजिब @0.25% (पर्णीय छिड़काव) + स्यूडोमोनास फ्लोरिसेंस सी.आई.ए.एच.–196 (जैव–कारक @5%, पर्णीय छिड़काव) + नीम पत्ती का अक्र (@5%, पर्णीय छिड़काव) का एक ही छिड़काव इस रोग के नियंत्रण में सबसे प्रभावी पाया गया है, जिससे न्यूनतम रोग तथा रोग की तीव्रता पायी गयी। रोग के प्रथम लक्षण दिखाई देते ही संयोजन का छिड़काव करने से रोग कम हो जाता है जिससे फसल की उपज बढ़ जाती है और अधिक मुनाफा कमा सकते हैं।

समेकित रोग प्रबंधन

- स्वस्थ व प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिए।
- गर्मियों में खेत की गहरी जुताई जरूर करना चाहिए।

- बीज को बेविस्टीन/विटावेक्स (1–2 ग्राम/लीटर) से उपचारित करके ही बुबाई करें।
- खेत में सफाई रखनी चाहिए व जंगली खरपतवारों को भी नष्ट करना चाहिए।
- रोग रोधी प्रजातियां उगाने से भी रोग को काफी कम किया जा सकता है।

सावधानियाँ

- रसायनों तथा अन्य का छिड़काव हमेशा सुबह या शाम को करना चाहिए।
- कवकनाशी अच्छी गुणवत्ता का ही प्रयोग में लाना चाहिए।
- छिड़काव करते समय मुंह को कपड़े से जरूर ढकना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-26 : बेर में फल मक्खी का समेकित कीट प्रबंधन

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क और अर्ध-शुष्क जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्व

बेर (जिजिफस मोरिसिआना) को भारतीय जुजुबी के रूप में भी जाना जाता हैं, जो कि एक अत्यंत सूखा सहिष्णु पौधा हैं और इसकी उत्पति देश भारत है। यह 'थार रेगिस्तान' का प्राकृतिक वानस्पतिक पौधा हैं। बेर की उपज और गुणवत्ता को सबसे अधिक नुकसान कीटों द्वारा होता हैं। दुनिया भर में बेर पर लगभग 130 तरह कीट देखे गये हैं जिनमें से 11 कीट अधिक प्रभावशाली माने गये हैं। यह फल मक्खी (कार्पोमिया वेसुविअना) बेर की फसल में सबसे विनाशकारी कीट है। इस कीट का प्रकोप शुष्क और अर्ध शुष्क क्षेत्रों जैसे कि ओरिएंटल एशिया, मध्य पूर्व व समशीतोष्ण एशिया, चीन, दक्षिण यूरोप व भारत आदि में देखा गया है। इसके प्रकोप से 80 प्रतिशत तक फल को नुकसान होता है।

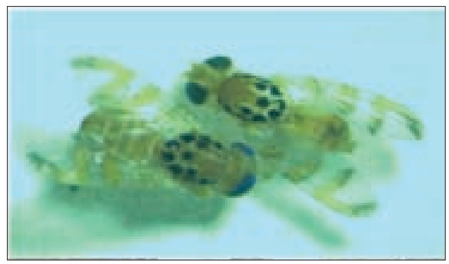

कीट के लक्षणः फल मक्खी के स्कूटम या स्कुटेलम पर काले रंग के निशान होते है। पंखों पर पीले और भूरे रंग के बैंड पाये जाते है। फल मक्खी नवंबर से अप्रैल तक दो से तीन पीढ़ियाँ पूरा कर लेती हैं। फल मक्खी अपने अंडे फल की केविटी में देती हैं। मेगट लाल भूरे रंग के लुगदी जैसे होते है। फल मक्खी अपना प्युपा मिट्टी में 5–7 सेमी नीचे देती है ओर गर्मियों में प्युपा मिट्टी में सुषुप्ता अवस्था में जाता है।

क्षति की प्रकृतिः शुष्क क्षेत्र में, इस कीट से नुकसान सितंबर से शुरू होकर दिसंबर तक होता है। फल लगने की शुरुआत के साथ ही फल मक्खी से नुकसान शुरू हो जाता हैं। इस कीट का मेगट ही फल को नुकसान पहुचाता है, व्यस्क नहीं। मेगट फल के गूदे को खाता है जिससे फल सड़ने लगता है और खाने योग्य नहीं रहता है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

बेर की फल मक्खी फल को अंदर से नुकसान पहुंचाती है। इसलिए फल में मक्खी लगने से पहले नियंत्रण आवश्यक है। इन सभी के लिए एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीम) जरूरी है जो कम लागत और सुरक्षित पर्यावरण के साथ नियंत्रण के लिए बेहतर तरीका है।

- जंगली झाड़ियों व पौधे की अच्छी तरह कटाई–छंटाई तथा बाग के आसपास की सफाई करनी चाहिए।
- समय–समय के अंतराल पर सभी गिरे हुए कच्चे फलों, क्षतिग्रस्त और संक्रमित फलों को एकत्रित

कर मिट्टी में दबा देना चाहिए।

- गर्मी के दौरान खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए जिससे मिट्टी में पड़े प्यूपा नष्ट हो जाते हैं।
- फल मक्खी से प्रतिरोधी किस्में जैसे तिकड़ी, काठा, इलाइची आदि किस्में उगानी चाहिए।
- बेर फल मक्खी के नियंत्रण के लिए जैविक प्रबंधन अपनाना चाहिए जैसे परजीवी, फोपियस कार्पोमिया से प्राकृतिक नियंत्रण 20 से 35% तक होता है।
- अजाडिरेक्टिन 1% का छिड़काव करते रहना चाहिए, जिससे फल मक्खी का प्रकोप कम होता है।
- फल पकने से पहले बेट स्प्रे करना चाहिए, जिसमें गुड़ 10 ग्राम और कीटनाशक मैलाथियोन 50 ईसी 2 मिली या डाइमेथोएट 30 ईसी 2 मिली प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए।
- फल मक्खी के नियंत्रण के लिए दो स्प्रे करना चाहिए, जिसमें पहला कीटनाशक, मैलाथियोन 50 ईसी 2 मिली स्प्रे जब बेर मटर के दाने के आकार के हो और दूसरा स्प्रे 25 दिन बाद स्पीनोसेड 45 इसी 0.4 मिली प्रति लीटर पानी के हिसाब से करना चाहिए।
- फल मक्खी के नुकसान से फल का गूदा खराब हो जाता है, जिससे फल सड़ने लगता है और खाने योग्य नहीं रहता है। इसमें फल छोटे व विकृत हो जाने से किसानों को बाजार में फलों का भाव बहुत कम मिल पाता है, जिससे आमदनी काफी कम हो जाती है। इस एकीकृत प्रबंधन को अपनाने से फल मक्खी बहुत कम हो जाती है जिससे फसल की उपज बढ़ जाती है और किसान अधिक मुनाफा कमा सकते हैं।

सावधानियाँः

- गर्मियों में खेत की जुताई करना जरूरी है।
- बेर के फल मटर के दाने के आकार के होने पर कीटनाशक का छिड़काव करना जरूरी है।
- रसायनों तथा अन्य का छिड़काव हमेशा सुबह या शाम को करना चाहिए।
- छिड़काव करते समय मुंह को कपड़े से जरूर ढकना चाहिए।
- रसायनों का छिड़काव हवा के विपरीत नहीं करना चाहिए।
- कोई भी कवकनाशी, कीटनाशी तथा अन्य को खरीदने के समय समाप्ति (एक्सपाइरी) दिनांक जरूर देख लेना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-27 : बेल में तितली प्रकोप का प्रबंधन

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क और अर्ध-शुष्क जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्व

शुष्क जलवायु में बेल एक बहुत उपयुक्त फसल है। बेल एक ऐसी फसल है जो गर्म शुष्क क्षेत्रों में न्यूनतम कृषि लागत के साथ सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। पिछले दो दशकों से फलों के उद्देश्यों के लिए भारत और दुनिया के अन्य शुष्क और अर्ध शुष्क क्षेत्रों में एक वाणिज्यिक फसल के रूप में इसकी खेती की जा रही है। इस बेल के पौधों में शुरुआती समय में इस तितली के लार्वा से बहुत नुकसान होता है। यह भारत में नींबू का एक गम्भीर कीट है। विभिन्न प्रकार के कीट पतंगे बेल पर आक्रमण करते है, जिनमें से बेल की तितली (पेपिलियों डेमोलियस) एक प्रमुख कीट है, जो की पेड़ को पतझड़ के समान बना देते हैं।

कीट के लक्षण: अण्डे गोल, हल्के पीले रंग, आधार पर चपटे चिकनी सतह, एक–एक करके पत्तियों पर दिये जाते है। लार्वा द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ अवस्था शिकार से बचने के लिये गहरा, चमकदार, काले भुरे रंग का सिर, 8वें व 9वें खण्डों पर सफेद चिन्ह के साथ लार्वा पर एक पक्षी के बीट जैसा जमा युरिक एसिड की एक सफेद धब्बा होता है जो कि शिकार से बचने में मदद करता है लार्वा की 5वीं अवस्था आकार में बेलनाकार और हल्के पीले रंग के साथ सफेद बेंड पाये जाते हैं। प्युपा हल्के भूरे गुलाबी रंग के होते हैं।

क्षति की प्रकृति: लार्वा नीम्बू वर्गीय फलों की नर्सरी अवस्था में जब पौधा 1–2 फीट की ऊंचाई का होता है तब गम्भीर रुप से क्षति करते है और नये पौधों को भी यह आंशिक रूप से नई वृद्धि के वायुवीय भागों को क्षति पहुंचाते हैं। लार्वा अधिक परिपक्व पौधों की अपेक्षा नये पत्ते को अधिक खाता है जो की प्रभावित नये पौधों को 100 प्रतिशत पतझड़ के समान बना सकता है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

बेल की तितली शुरुआती दिनों में पौधे की पत्तियों को नुकसान पहुचाती है। इसलिए इसके नियंत्रण के लिए कीटनाशक की आवश्यकता होती है। इस कीट को नियंत्रण करने के लिए स्पीनोसेड 45 इ.सी. 0.4 मिली प्रति लीटर पानी सबसे प्रभावी साबित हुआ और इसके बाद मेलाथिओन 50 इ.सी. कीटनाशक

हुआ। जबकि, नीम आधारित कीटनाशक जैसे एनएसकेई (NSKE 5%) और नीम का तेल तितली के लार्वा के नियंत्रण के लिए सबसे कम प्रभावीशाली रहा।

- इन कीट के लिए एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीम) भी जरूरी है जो कम लागत और सुरक्षित पर्यावरण के साथ नियंत्रण के लिए बेहतर तरीका है।
- इस कीट के लार्वा बहुत बड़े होते है जिनको हाथ से पकड़ कर मार देना चाहिए।
- तितली के युवा लार्वा को परभक्षी के द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है जैसे पीले ततैया (पॉलिस्टेस हेबरस), प्रेइंग मेंटिस और मकड़ियों आदि।
- अंडे परजीवी जैसे ट्राइकोग्रामा चिलोनिस और टेलीनोमस एसपी. द्वारा तितली के अंडो को 75 प्रतिशत तक नियंत्रित करते हैं।
- कुछ पौधों के अक्र जैसे पीपल, पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस, नीम और धतूरा आदि के छिड़काव से 50–60 प्रतिशत तक कीट के लार्वा को नियंत्रित किया जा सकता है।
- इस कीट के लार्वा की संख्या मार्च और अक्टूबर में ज्यादा होती है उस समय कीटनाशक स्पीनोसेड 45 इ.सी. 0.4 मिली या मेलाथिओन 50 इ.सी. 2 मिली प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करना चाहिए।

इस कीट के लार्वा द्वारा नुकसान पौधे की नई पत्तियों व शाखाओं को होता है, जिससे प्रभावित नये पौधों 100 प्रतिशत पतझड़ के समान दिखाई देते हैं और पौधे की वृद्धि भी रुक जाती है। फलों का उत्पादन भी कम हो जाता है, जिससे किसानों की आमदनी काफी कम हो जाती है। इस प्रबंधन को अपनाने से तितली के लार्वा बहुत कम हो जाते हैं, जिससे पौधे की बढ़वार रूकती नहीं है और उत्पादन भी बढ़ जाता है।

सावधानियाँः

- गर्मियों में खेत की जुताई करना जरूरी है।
- मार्च और अक्टूबर के महीने में कीटनाशक का छिड़काव करना जरूरी है।
- रसायनों तथा अन्य का छिड़काव हमेशा सुबह या शाम को करना चाहिए।
- छिड़काव करते समय मुंह को कपड़े से जरूर ढ़कना चाहिए।
- रसायनों का छिड़काव हवा के विपरीत नहीं करना चाहिए।
- कोई भी कवकनाशी, कीटनाशी तथा अन्य को खरीदने के समय समाप्ति (एक्सपाइरी) दिनांक जरूर देख लेना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-28 : कददूवर्गीय सब्जियों में फल मक्खी का समेकित कीट प्रबन्धन

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क और अर्ध-शुष्क जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्व

शुष्क फसलों में, इस तरह की जलवायु में खेती के लिए कददूवर्गीय सब्जियां बहुत उपयुक्त फसल है। कददूवर्गीय सब्जियां ऐसी फसलें हैं जो गर्म शुष्क क्षेत्रों में न्यूनतम कृषि लागत के साथ सफलतापूर्वक उगायी जा सकती है। कददूवर्गीय सब्जियां ज्यादातर जायद ऋतु में ही ऊगाई जाती है जैसे कि मतीरा, खरबूजा, टिण्डा, लौकी, काकड़िया, तोरई आदि। कददूवर्गीय सब्जियों को मानव आहार का एक अभिन्न भाग माना जाता है। एक आदमी को रोजाना 300 ग्राम सब्जियां खानी चाहिए। भारत दुनिया में सब्जी उत्पादन में दूसरा सबसे बड़ा देश है और चीन का पहला स्थान है। सब्जियां विटामिन और खनिज लवणों का समृद्ध स्रोत होती हैं। सब्जी उत्पादन में कीड़ों से बहुत नुकसान होता है। इस मक्खी को आमतौर पर तरबूज की फल मक्खी (बैक्ट्रोसेरा (डैक्स) कुकुरबिटी) कहा जाता है और इस फल मक्खी का आक्रमण सभी कद्दू कुल के पौधों में होता है। इस फल मक्खी से 60 से 100 प्रतिशत तक फलों को नुकसान हो जाता है।

कीट के लक्षण: वयस्क मक्खी का शरीर गहरे भूरे लाल रंग का होता है और वक्स पर पीले रंग के धब्बे पाये जाते है। वयस्क सर्दियों के दौरान शीत अवस्था में चले जाते हैं और वे गर्म मौसम में सक्रिय हो जाते हैं।

क्षति की प्रकृति: इस फल मक्खी के वयस्क के पंख भूरे रंग के होते है। इस कीट का मैगट ही क्षति पहुंचाता है। इस कीट का प्रकोप जायद तथा खरीफ दोनों ऋतुओं में होता है। मादा फल मक्खी अपने अंडरोपक को कोमल फलों में धँसाकर गूदे में अण्डे देती है। ग्रसित फल के छेद से लसदार हल्के भूरे रंग का द्रव निकलता है। अण्डे से मैगट निकलते हैं जो कि गूदे को खाकर उसमें स्पंज, जैसे बहुत से छेद कर देते है और फल सड़ने लगता है।

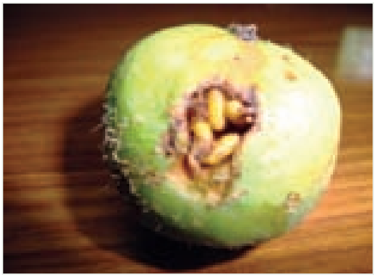

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

कददूवर्गीय फल मक्खी की शुरुआत जब पौधे में बोने के 40 दिनों बाद फूल आना शुरू होता है, उसी समय से नुकसान शुरू हो जाता है। इसलिए इसके नियंत्रण के लिए आईपीम की आवश्यकता होती है। इस कीट को नियंत्रण करने के आईपीएम मॉड्यूल जैसे प्रतिरोधी जीनोटाइप की बुआई, बुआई के 20 दिन बाद नीम तेल का स्प्रे, बुआई के 42 दिन बाद फेरोमोन ट्रैप (10/हेक्टेयर) लगाना, बुआई के 50 दिन बाद तुंबा फल का अक्र (टीएफई 5%) का छिड़काव व बुआई के 60 दिन बाद स्पाइनोसेड 46 एससी का स्प्रे फल मक्खी के नियंत्रण के लिए बहुत प्रभावी रहा।

- इन कीट के लिए एकीकृत कीट प्रबंधन भी जरूरी है जो कम लागत और सुरक्षित पर्यावरण के साथ नियंत्रण के लिए बेहतर तरीका है।
- फल को पेपर या प्लास्टिक से ढकना: पौधे के फलों को 2–3 दिन के अंतराल पर दो परत पेपर या प्लास्टिक से बांधना चाहिए जिससे की फल मक्खी अपने अण्डे फलों पर नहीं दे पाती है। इस प्रबंधन से 40–58 प्रतिशत तक फलों को नुकसान होने से बचाया जा सकता है।
- खेत की सफाई करना: फल मक्खी के प्रबंधन में सबसे प्रभावी तरीका खेत की सफाई करना होता है क्योकि इसके प्युपा मिट्टी में पाये जाते हैं।
- क्यू–आकर्षण ट्रैप: यह ट्रैप फल मक्खी के प्रबंधन में प्रभाशाली है, जो नर को आकर्षित करती है और इसके अंदर कीटनाशक रखा जाता है, जिसके द्वारा नर मर जाता है और मादा के संभोग करने के लिये नर नहीं मिलता है। इस प्रकार से इन कीडों का प्रबंधन कर सकते हैं।
- रासायनिक नियंत्रण: जब कीड़ों को समाप्त करने के सारे उपाय खत्म हो जाते हैं तो रासायनिक कीटनाशक ही अंतिम उपाय नजर आता है। इस फल मक्खी का नियंत्रण के लिए बुआई के 40 और 60 दिनों बाद कीटनाशक स्पीनोसेड 45 एससी 0.4 मिली या मेलाथिओन 50 ईसी के दो स्प्रे करना चाहिए।
- इस फल मक्खी के लार्वा द्वारा फल को नुकसान होता है। जिससे कभी–कभी 100 प्रतिशत तक नुकसान हो जाता है। इससे फलों का उत्पादन भी कम हो जाता है जिससे किसानों की आमदनी काफी कम हो जाती है।

सावधानियाँ:

- गर्मियों में खेत की जुताई करना जरूरी है।
- ईटीएल और कीट प्रतिरक्षक अनुपात का ध्यान रखना चाहिए।
- रसायनों तथा अन्य का छिड़काव हमेशा सुबह या शाम को करना चाहिए।
- छिड़काव करते समय मुंह को कपड़े से जरूर ढकना चाहिए।
- रसायनों का छिड़काव हवा के विपरीत नहीं करना चाहिए।
- कोई भी कवकनाशी, कीटनाशी तथा अन्य को खरीदने के समय समाप्ति (एक्सपाइरी) दिनांक जरूर देख लेना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-29 : लसोड़ा में टिंजिड बग (*डिक्टाइला चौरिआनी*) का प्रबंधन

संस्तुत कृषि जलवायु : गर्म शुष्क और अर्ध-शुष्क जलवायु क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का महत्त्व

शुष्क फसलों में, इस तरह की जलवायु में खेती के लिए लासोड़ा बहुत उपयुक्त फसल है। लसोड़ा एक ऐसी फसल है जिसे गर्म शुष्क क्षेत्रों में न्यूनतम कृषि लागत के साथ सफलतापूर्वक उगाया जा सकता है। आमतौर पर लसोड़ा को रेगिस्तान की चेरी कहा जाता है। पिछले दो दशकों से फलों, सब्जी एवं अचार उद्देश्यों के लिए भारत और दुनिया के अन्य शुष्क और अर्ध शुष्क क्षेत्रों में इसकी खेती की जा रही है। लसोड़ा में टिंजिड बग (डिक्टाइला चौरिआनी) के आक्रमण को सर्वप्रथम हलधर और सिंह ने 2010 में बीकानेर में देखा गया। डि. चौरिआनी को सर्वप्रथम कोड्रिया स्पी. पर कोयम्बटूर में 1938 में उपस्थिति दर्ज की गई थी। इस कीट के प्रकोप से लसोड़े को 30–45 प्रतिशत तक नुकसान हो जाता है।

क्षति की प्रकृतिः इस कीट का अधिकतम आक्रमण अक्टूबर माह में होता है। इस बग के निम्फ व वयस्क पौधे से निकल रही नई पत्तियों व युवा शाखाओं से रस चूसते हैं। जिससे पत्तियां पीली होकर मुड़ जाती हैं व पौधे की वृद्धि प्रभावित होती है और पत्तियां व युवा शाखाएं सूख जाती हैं।

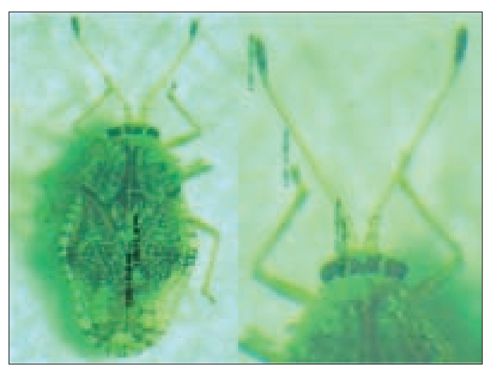

कीट के लक्षणः मादा, नर की अपेक्षा आकार में बड़ी होती है। इसका शरीर आयताकार, हल्का पीले रंग के साथ में भूरा या आक्रमण चिन्हों का होता है। कॉलर और हुड पीले भूरे रंग की, वक्ष स्टर्ना गहरे रंग के साथ गहरे लाल रंग का शरीर होता है। एंटीना पीले भूरे रंग का होता है और 1/3 भाग कालापन लिया हुआ होता है। शरीर की लम्बाई 2.25 मिमी और चौडाई 0.88 मिमी होती है। सिर बहुत छोटा होता है मजबूत धंसा हुआ एवं सामने से बंद होता है। टांगे काफी पतली और पीले भूरे रंग की होती है। प्रोनोट्म काफी मजबूत व त्रिकोणीय आकार का होता है। नर व मादा शरीर की औसतन लम्बाई 2.17–2.50 मिमी होती है।

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं एवं लाभ

लसोड़ा की टिंजिड बग पौधे की पत्तियों को नुकसान पहुंचाती है। इसलिए इसके नियंत्रण के लिए

सिस्टेमेटिक कीटनाशक (systematic insecticide) की आवश्यकता होती है। इस कीट को नियंत्रण करने के लिए इमिडाक्लोप्रिड सबसे प्रभावी साबित हुआ और इसके बाद एसीफेट कीटनाशक हुआ। जबकि, नीम आधारित कीटनाशक जैसे एनएसकेई (NSKE 5%) और नीम का तेल लसोड़ा बग के नियंत्रण के लिए सबसे कम प्रभावी रहा। इन कीट के लिए एकीकृत कीट प्रबंधन (आईपीम) भी जरूरी है, जो कम लागत और सुरक्षित पर्यावरण के साथ नियंत्रण के लिए बेहतर तरीका है।

- पौधे की उचित समय पर जुताई करनी चाहिए, जिससे पौधे वृद्धि अच्छी होती है और कीट के प्रति प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।
- पौधों में समय–समय पर्याप्त मात्र में सिंचाई करें।
- कीट से क्षतिग्रस्त और खराब पत्तियों और तने को निकाल देना चाहिए है।
- इस कीट की संख्या ज्यादा अक्टूबर महीने में होती है इसके लिए 15 दिन के अंतराल पर दो स्प्रे इमिडाक्लोप्रिड व एसीफेट का 0.5 मिली प्रति लीटर पानी के हिसाब से करना चाहिए।

इस कीट का नुकसान नई पत्तियों, फल, शाखाओं को होता है। जिससे पत्तियाँ पीली होकर मुड़ जाती है और पौधे की वृद्धि प्रभावित होती है। इससे फलों का उत्पादन कम हो जाता है और फल का आकार भी छोटा रह जाता है, जिससे किसानों को बाजार में फलों का भाव बहुत कम मिल पाता है और किसानों की आमदनी काफी कम हो जाती है।

सावधानियाँः

- गर्मियों में खेत की जुताई करना जरूरी है।
- अक्टूबर महीने में कीटनाशक का छिड़काव करना जरूरी है।
- रसायनों तथा अन्य का छिड़काव हमेशा सुबह या शाम को करना चाहिए।
- छिड़काव करते समय मुंह को कपड़े से जरूर ढकना चाहिए।
- रसायनों का छिड़काव हवा के विपरीत नहीं करना चाहिए।
- कोई भी कवकनाशी, कीटनाशी तथा अन्य को खरीदने के समय समाप्ति (एक्सपाइरी) दिनांक जरूर देख लेना चाहिए।

भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र
अनुसंधान संस्थान

जोधपुर

प्रौद्योगिकी-30 : काजरी बेर-2018 (बेर की सबसे अगेती किस्म)

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क व अर्ध शुष्क क्षेत्र, विशेषकर असिंचित क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं व लाभः

काजरी बेर–2018, बेर की नई व सबसे पहले पकने वाली किस्म हैं जो कि गोला किस्म के बीजू पौधों में से चयन विधि द्वारा विकसित की गई हैं। इस किस्म के पौधे अधिक फैलने वाले तथा अधिक फल उत्पादन क्षमता वाले होते हैं। इसके फल पकने पर सुनहरे पीले, गोल, औसत फल भार 19.26 ग्राम, फल का आकर 3.19–3.13 से. मी, घुलनशील ठोस पदार्थ 18.83 प्रतिशत तथा अम्लता 0.51 प्रतिशत और विटामिन सी 50.73 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम होता है। इस किस्म की उपज एक जैसी परिस्थिति में गोला किस्म से लगभग 25 प्रतिशत ज्यादा होती है साथ ही गोला से 10–12 दिन पहले फल पकने शुरू हो जाते है। यह किस्म बारानी क्षेत्रो के लिए ज्यादा उपयुक्ता है क्योकि एक बार पूरक सिंचाई से पौधे स्थापित हो जाने के बाद वर्षा के उपर निर्भर रहकर भी फल उत्पादन लिया जा सकता है यह किस्म जलवायु परिवर्तन के लिहाज से भी ज्याद उपयोगी पाई गई है।

सावधानियाँः

समय पर कटाई–छंटाई व पौध सरंक्षण कार्य।

प्रौद्योगिकी-31 : अनार की नई किस्म- काजरी विशाल

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क और अर्ध शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं व लाभः

इसे गगोश और खोग किस्मों के संकरण द्वारा विकसित किया गया है। पौधे अर्ध प्रसार, मध्यम आकार एवं ऊंचाई के होते हैं। यह एक अगेती किस्म है, जो फूल खिलने के 120–130 दिन बाद तुड़ाई के लायक हो जाती है। बड़े आकार के फल (औसतन 350ग्राम) के साथ–साथ बहुत नरम बीज तथा आकर्षक पीले लाल रंग के कारण इस किस्म में आंतरिक और निर्यात बाजार दोनों लिए अनुकूल क्षमता है। एरिल (60%) और जूस की मात्रा (40-45%) अन्य लोकप्रिय किस्मों की तुलना में काफी अधिक हैं। रस में कुल घुलनशील ठोस पदार्थ लगभग 17.5–18.6 डिग्री ब्रीक्स के बावजूद अम्लता (0.48–0.52%) कम है। उचित बाग प्रबंधन के साथ पांच साल बाद लगभग 20–25 किग्रा/पौधा बेहतर गुणवत्ता के फल प्राप्त किये जा सकते है।

यह एक अगेती किस्म है। इसके फल आकार बड़े, बीज छोटे एवं मुलायम, छिलका पतला तथा एरिल की मात्रा अधिक, तथा रंग चमकीला आकर्षक लालिमा लिए पीला होता है। इसके फल बड़े आकार के (औसतन 350 ग्राम) के साथ–साथ बहुत नरम बीज तथा आकर्षक पीले लाल रंग के कारण इस किस्म में आंतरिक और निर्यात बाजार दोनों लिए अनुकूल क्षमता रखता है। अरिल और रस सामग्री अधिक है अतः प्रसंस्करण के लिए भी उपयुक्त है। यह लोकप्रिय किस्म की तुलना में 20–25 दिन अगेती है, इसलिए खेती की लागत कम हो सकती है।

सावधानियाँः

फसल को मृग बहार मौसम के लिए नियंत्रित किया जाना चाहिए। प्रति पेड़ फलों की संख्या 80–100 रखनी चाहिए। सबसे अच्छी गुगावत्ता के लिए फर्टी–ड्रिप सिस्टम की आवश्यकता है।

प्रौद्योगिकी-32 : लसोड़ा की उन्नत किस्म-मरु समृद्धि

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क व अर्ध-शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं व लाभः

यह लसोड़ा की अधिक उत्पादन देने वाली उन्नत किस्म है जो की चयन विधि द्वारा विकसित की गयी है। इसके पौधे अधिक फैलने वाले तथा औसत उँचाई 4.8 मीटर वाले होते है, इसके फल गुच्छे में लगते है एक फल गुच्छे का औसत वजन 61.5 ग्राम तथा एक फल का वजन 10.5 ग्राम होता है। फरवरी–मार्च में फूल आते है; जबकि फलों की तुड़ाई मार्च–अप्रेल में करते है। एक गुच्छे में औसतन 14 फल होते हैं। बीजू पौधे 5 वर्ष बाद फल देने लगते हैं जबकि कालिकायन किए पौधों में 3–4 वर्ष बाद फल आने लगते है। यह अधिक फल उत्पादन क्षमता वाली किस्म है, जिसमें पौधे लगाने के 5 वर्ष बाद लगभग 100 किलोग्राम फल प्रति पेड़ उत्पादन लिय जा सकता है। कीड़े बीमारियों का प्रकोप नही के बराबर होता है। पत्तों की तुडाई–अगेती व एक समान फलन के लिये अति आवश्यक होती है। नवम्बर से जनवरी तक सिंचाई बन्द कर देने से पत्ते पीले पड़ कर गिरने लगते हैं। प्राकृतिक रूप से सभी पत्ते एक साथ नहीं गिरते हैं, इसलिए जनवरी के प्रथम सप्ताह में पेड़ों से सभी पत्ते हाथ से तोड़ देने चाहिए। ऐसा करने से फूल व फल जल्दी व एक साथ आते है। पत्तों की तुडाई इथ्रेल नामक रसायन की 2.5 मि.लि प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करके भी कर सकते हैं। पत्ते तोड़ने के बाद फरवरी के दूसरे सप्ताह में देशी खाद या कम्पोस्ट डाल कर अच्छी तरह 6 इंच गहरा खोद कर मिट्टी में मिलाकर सिंचाई शुरू करें। कम पानी व कम लागत में अधिक मुनाफा लिया जा सकता हैं।

सावधानियाँः

लसोड़ा में फल व फूल पिछले वर्ष की शाखाओं पर ही लगते हैं, इसलिए इसमें प्रतिवर्ष नियमित कटाई की जरूरत नहीं पड़ती है। शुरू के दो सालो में इसे एक मजबूत शाखाओं की संतुलित वृद्धि के लिए छंटाई करना अत्यावश्यक होता है। छंटाई करते समय एक दूसरे से ऊपर से गुजरने वाली तथा नीचे की ओर झुकी हुई शाखाओं को धारदार सिकेटियर से कटाई करें। इसके अतिरिक्त सूखी तथा रोग ग्रस्त शाखाओं को समय पर काटते रहना चाहिए। कटाई उपरान्त शाखाओं के कटे भाग पर बोर्डोपेस्ट का लेप लगाना चाहिये। पौधों की रोपाई के प्रथम दो वर्षों में नियमित रूप से सर्दियों में 15 दिन तथा गर्मियो में 7–10 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिए। जब पौधे 3–4 साल के हो जाए तब उनमें फलन साधारणतया शुरू हो जाता है। इस समय सिंचाई का उचित प्रबंधन अति आवश्यक है। लसोड़ा के बड़े पेड़ों में जून से सितम्बर के बीच वर्षा ऋतु होने के कारण सिंचाई की आवश्यक्ता नहीं पड़ती है। अक्टूबर माह मे् एक–दो सिंचाई कर सकते है्। नवम्बर से जनवरी तक सिंचाई बन्द कर देनी चाहिये ताकि पत्ते झाड़ने में आसानी रहे। इसके बाद फरवरी से अप्रेल तक 7–10 दिन के अन्तर पर सिंचाई करनी चाहिये। एक पूर्ण विकसित पेड़ में लगभग 400 लीटर पानी एक सिंचाई में देना चाहिये।

प्रौद्योगिकी-33 : करौन्दे की उन्नत किस्म-मरु गौरव

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क व अर्ध-शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं व लाभः

यह करौन्दे की अत्यधिक उत्पादन देने वाली उन्नत किस्म है जो कि बीजू पौधो से लम्बे समय तक अवलोकन के बाद चयतिन की गयी है। इसके पौधे फैलने वाले तथा घनी केनोपीयुक्त तथा उँचाई 3.19 मीटर होती है। इसके फल गुच्छों में लगते है। फल मेरुन रंग के होते हैं। फलों का आकार 2.18–1.63 से.मी. तथा औसत वजन 3.74 ग्राम प्रति फल होता है। एक फल में 6.13 बीज, गूदा 88.27 प्रतिशत, शुष्क पदार्थ 12.85 प्रतिशत, कुल घुलनशील ठोस पदार्थ 9.4 प्रतिशत, विटामिन सी. 35.88 मिलिग्राम प्रति 100 गग्रम, खटास 2.82 प्रतिशत व उपज लगभग 35–50 किलो प्रति झाड़ी होती है। इस किस्म में सूखा सहन करने का विशेष गुण होता हैं। फूल –फल लगने की प्रक्रिया अन्य किस्मों की तरह मार्च–अप्रेल माह में ही पूरी हो जाती है, परन्तु फल लगने के बाद सुसुप्तावस्था प्रवेश कर जाते हैं जिससे फलों की बढ़वार अगस्त माह में वर्षा होने तथा मौसम के अनूकूल होने पर ही शुरू होती है। फलस्वरूप यह गर्मी के प्रतिकूल वातावरण को सहन कर पाती हैं। यह गुण शुष्क क्षत्रों के लिहाज से अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसी कारण इस किस्म के फल सबसे अन्त में सितम्बर माह में पकते हैं। पौधों को जीवित बाड, फल के लिए एवं शोभाकारी पौधों के रूप में उपयोग किया जा सकता हैं। वर्षा जल संग्रहण करके फल उत्पादन लिया जा सकता है।

सावधानियाँः

बाड़ के रुप में लगे पौधों को हेज की तरह आगे व पीछे की तरफ से काटते हैं जबकि पौधों की बीच में कंटिग नहीं करते हैं ताकि इनकी शाखा, आपस में मिलकर घनी बाड़ का रुप ले सके। बगीचे के रुप में लगे पौधों में नीचे से निकलने वाली शाखाओं व सकर्स को समय–समय पर निकालते रहना चाहिए। पूर्ण विकसित पौधों के घनी शाखाओं की भी कभी–कभी छंटनी करनी चाहिये ताकि पौधों के मध्य भाग में हवा तथा प्रकाश का प्रवेश हो सके, साथ ही रागग्रस्त व सुखी टहनीयों को भी हटाते रहें।

करौन्दा के पौधे एक बार लगने के पश्चात असानी से नहीं जाते हैं लेकिन नियमित फल लेने के लिए सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है, चूंकि इसमे मार्च–अप्रैल में फूल आते है तथा गर्मीयों में फल पेड़ो पर लगे होते हैं इसलिए गर्मीयों में 10–12 दिन के अन्तराल पर लगभग 200 लीटर पानी प्रति पौधा देना चाहिए। वर्षा ऋतु में सिंचाई की आवश्यकता लगभग नहीं के बराबर रहती है। फिर भी वर्षा का लम्बा अन्तराल होने पर सिंचाई कर सकते हैं। फल लगे पौधों में पानी की कमी का संकेत सर्वप्रथम फलों पर पड़ता है जो कि उस स्थिति में मुरझाने लगते हैं। इसलिए फल लगे पौधों को समय पर सिंचाई अवश्य करें।

प्रौद्योगिकी-34 : बेर के पुराने और अनुत्पादक बागों का जीर्णोद्धार

संस्तुत कृषि जलवायु : बेर की खेती वाले क्षेत्र, शुष्क और अर्ध-शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं व लाभः

मई माह में अनुत्पादक पेड़ों को जमीन की सतह से काटकर कटे भाग पर कॉपर ऑक्सीक्लोराइड़ का लेप लगा देना चाहिए। पेड़ के चारों तरफ गुड़ाई करके थाला बना देना चाहिए, जिससे वर्षा का अधिकांश पानी पेड़ों को मिल सके। थालों में 10–15 किग्रा० अच्छी प्रकार से सड़ी गोबर की खाद वर्षा आरम्भ से पहले ही मिला देनी चाहिए। 12–15 दिनों के पश्चात कटे भाग के चारों तरफ बहुत सी नई नई शाखायें निकलना प्रारम्भ हो जाती है। इन शाखाओं में से अलग–अलग दिशाओं में 2–3 को छोड़कर शेष को काटकर हटा देना चाहिए। चुनी हुई 2–3 शाखाओं पर जल्दी, मध्यम तथा देर से पकने वाली प्रजातियों क्रमशः गोला, सेब और उमरान या उस क्षेत्र विशेष की उत्तम/प्रचलित किस्मों को जुलाई महीने में कलिकायन करना चाहिए। कलिकायन लगभग 6–9 इंच की ऊंचाई पर ही करना चाहिए। कलिकायन के 10–15 दिनों के पश्चात इनमें फुटान शुरू हो जाता है तथा 90 प्रतिशत से अधिक तक सफलता प्राप्त हो जाती है। कलिकायन के बाद बगल से अथवा कलिकायन के नीचे से निकलने वाली शाखाओं को निरंतर निकालते रहना चाहिए। जीर्णोद्धार के तीन वर्ष पश्चात ही पेड़ों में पूरी बढ़वार आ जाती है। बेर के पेड़ 25–30 साल की सामान्य फसलों देने के बाद कम उपज और हीन गुणवत्ता के छोटे फल देने लगते हैं। इसके अलावा पश्चिमी राजस्थान और अन्य क्षेत्रों में *जिजिफस रोटुंडिफोलिया* की बड़ी संख्या में रोपण भी मौजूद हैं। गैर–वर्गीत मूल और खराब आनुवंशिक क्षमता के इस तरह के स्थापित और स्वस्थ पेड़ों को सुधार और क्षेत्र–विशिष्ट वाणिज्यिक खेती के साथ कायाकल्प द्वारा उत्पादक बागों में परिवर्तित किया जा सकता है। यद्दिप पौधों में फल आना पहले वर्ष के पश्चात ही शुरू हो जाता है,

परन्तु गुणवत्तायुक्त लाभकारी ऊपज (35–40किग्रा/पेड़) तीन वर्ष पश्चात प्राप्त होने लग जाती है। वर्षा आधारित बेर की खेती के दशा में तीसरे वर्ष तक में जीर्णोद्धार किए गए बागों की औसत उपज सामान्य रूप से प्रबंधित किए गए बागों के उपज के बराबर प्राप्त होने लग जाती है। जीर्णोद्धार किए गए बागों की कुल उत्पादकता बढ़ाने के लिए अन्तः फसलों विशेषकर मूंग को भी सफलतापूर्वक लिया जा सकता है। कायाकल्प की प्रक्रिया से ठीक पहले पैदावार के स्तर की तुलना में गुणवत्ता वाले फलों (75% ए ग्रेड फल) की 3–3.5 गुना अधिक पैदावार। इस तकनीक ने बीजू पेडों को अधिक उत्पादक, लाभदायक और स्वीकार्य किस्मों को बहुत कम समय में परिवर्तित करने का अवसर प्रदान किया है। पेड़ों को 15–20 साल के लिए अतिरिक्त नया एवं उत्पादक जीवन दिया जा सकता है (कायाकल्प के दो साल बाद लाभकारी उपज) कायाकल्प की प्रक्रिया से ठीक पहले पैदावार के स्तर की तुलना में गुणवत्ता वाले फलों (75% ए ग्रेड फल) की 3–3.5 गुना अधिक पैदावार ली जा सकती है। उत्पादकता बढ़ाने के लिए बेर की कतारों के बीच मूंग की अंतर फसल ली जा सकती है. इस तकनीकी द्वारा तीन साल के अन्दर बाग के उत्पादकता स्तर को फिर से हासिल किया है।

सावधानियाँः

पेड़ों की कटाई केवल मई महीने में की जानी चाहिए, जब पौधे निष्क्रिय हों, सक्रिय विकास के मौसम में नहीं हों। कवक संक्रमण से बचने के लिए कट सतह को कवकनाशी का लेप लगा देना चाहिए। कलिकायन केवल एक या दो चयनित शाखाओं में, 6–9 इंच की ऊंचाई पर ही किया जाना चाहिए। साइड शूट को दिखाई देते ही तुरंत हटा देना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-35 : शुष्क क्षेत्र में अनार की खेती के लिए अभिनव जल और ऊर्जा संचयन मण्डल

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क और अर्ध शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

अनार की खेती के लिए सौर ऊर्जा संचालित फर्टी–ड्रिप प्रगाली के साथ एक नवीन जल संचयन मॉडल विकसित किया गया। कम लागत वाले एचडीपीई अस्तर के 80 प्रतिशत अपवाह की भंडारण क्षमता वाले खेत तालाब को बगीचे के पास तैयार किया जाना चाहिए। रन–आफ को बढ़ाने के लिए, उचित फील्ड लेवलिंग के बाद पौधों और अंतर पंक्तियों के बीच प्लास्टिक मल्चिंग करना आवश्यक है। जल दक्षता को बढ़ाने के लिए अनार को विनियमित घाटे वाली सिंचाई और प्लास्टिक मल्च का उपयोग करना अति आवश्यक। अनार के पेड़ों के अंदर उचित सूक्ष्म जलवायु बनाने और वाष्पीकरण के नुकसान को कम करने के लिए पेड़ों को ग्रो कवर से ढक देना चाहिए। काजरी में प्रयोग के आधार पर पाया गया की 0.3 हेक्टेयर क्षेत्र के एक अनार के बाग से तीन बार की वर्षा में लगभग 2.0 लाख लीटर पानी का संचय खेत तालाब में किया गया, जो इष्टतम उपज के साथ 200 अनार के पौधे को सींचने के लिए पर्याप्त था। अतः जहां पानी और ऊर्जा की उपलब्धता नहीं है वहां इस मॉडल द्वारा अनार की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। यह स्व टिकाऊ मॉडल है। यह खेत से ही वर्षा जल का संचयन होता है, इसलिए भूजल की खारे पानी की सिंचाई से बचा जा सकता है। ड्रिप सिस्टम को सौर प्रगाली द्वारा चलाया जाएगा। किसी बाहरी बिजली की आवश्यकता नहीं होती है। इसलिए खेती की लागत भी कम हो जाती है। जहां पानी और ऊर्जा की उपलब्धता नहीं है वहां इस मॉडल द्वारा अनार की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है।

सावधानियाँः

- फसल को मृग बहार मौसम के लिए नियंत्रित किया जाना चाहिए।
- सबसे अच्छी गुगावत्ता के लिए सोलर आधारित फर्टी–ड्रिप सिस्टम की आवश्यकता है।
- जल दक्षता को बढ़ाने के लिए अनार को विनियमित घाटे वाली सिंचाई और प्लास्टिक मल्च का उपयोग करना अति आवश्यक।
- अनार के पेड़ों के अंदर उचित सूक्ष्म जलवायु बनाने और वाष्पीकरण के नुकसान को कम करने के लिए पेडों को ग्रो कवर से ढक देना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-36 : ग्रीनहाउस खीरा में कलम (ग्राफ्टिंग) तकनीक द्वारा अधिक उत्पादन

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क और अर्ध शुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

राजस्थान की जलवायु, मिट्टी तथा उपलब्ध भूमिगत पानी सब्जियों की खेती की दृष्टि से अपेक्षाकृत निम्न कोटी के हैं, फलस्वरूप इनकी उत्पादकता यहाँ काफी कम है। कठिन परिस्थित के अलावा संसाधनों के बेहतर उपयोग हेतु संरक्षित खेती का आयाम राजस्थान में काफी बढ़ रहा है। परंतु इसकी सफलता में कुछ चुनौती है जैसे पॉलीहाउस में मौसम के उतार– चढ़ाव, पानी व मृदा की निम्न गुणवत्ता के साथ मृदा जनित रोग तथा सर्दियों की फसल में निम्न तापक्रम की वजह से बहुप्रचलित खीरे की फसल के बेहतर उत्पादन लेने में समस्या आती है। काजरी में ग्राफ्टिंग पर सतत अनुसन्धानों में पाया गया कि सामान्य व सीमित सिंचाई जल के उपलब्धता की दशा में संकर खीरे (टर्मिनेटर) को अंतर–प्रजातीय संकर कद्दू (NSSQ 55) के मूलवृंत पर कलम करके उगाने से मौसम के उतार–चढ़ाव के साथ कम पानी व निम्न गुगावत्ता की मृदा में भी फल उत्पादन समान्य खीरे की अपेक्षा काफी अधिक होता है। इसके अलावा मृदा जनित रोगों का प्रकोप कलमी पौधों पर न के बराबर पाया गया। यह तकनीक पॉलीहाउस खीरे के सफल व समन्वित उत्पादन प्राप्त करने में एक महत्वपूर्गा योगदान प्रदान कर सकती है। सामान्य संकर किस्म के खीरे की अपेक्षा उपरोक्त ग्राफटेड खीरे से औसत 31 प्रतिशत जबकि कम पानी की उपलब्धता में 39 प्रतिशत अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। जल उपयोगिता की दृष्टि से प्रति किलोग्राम पॉलीहाउस में समान्य खीरे को उत्पादित करने हेतु 33–36 लीटर पानी की तुलना में ग्राफ्टेड पौधों को मात्र 24 से 26 लीटर पानी की आवश्यकता होती है।

सावधानियाँः

ग्राफ्टिंग प्रक्रिया तकनीकी रूप से सक्षम उद्यमी अथवा प्रशिक्षित नर्सरी द्वारा की जानी चाहिए। मूलवृंत संकर किस्म के होने के कारगा इनके बीज की उपलब्धता नामधारी बीज कंपनी द्वारा प्राप्त कर सकते हैं। किसान भाई पॉली हाउस में लगाने हेतु खीरे के ग्राफटेड पौधे नर्सरी से प्राप्त करें।

प्रौद्योगिकी-37: ग्रीनहाउस खीरा में कलम (ग्राफ्टिंग) तकनीक द्वारा शरद ऋतु में कम तापक्रम पर जल्द व अधिक उत्पादन

संस्तुत कृषि जलवायु : समस्त उत्तर भारतीय मैदानी भाग

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभ:

वैसे पॉलीहाउस में खीरे की खेती वर्ष भर की जाती है परंतु शरद ऋतु में प्राकृतिक संवाहक पॉलीहाउस और खासकर नेट हाउस के अंदर उत्तरी भारत व खासकर पश्चिमी राजस्थान में रात्रि का तापमान खीरे के लिए उपयुक्त 16–18 डिग्री सेल्सियस से काफी नीचे रहता है, साथ ही सापेक्षिक आद्रता काफी अधिक होती है जिससे प्रयाप्त मात्रा में पानी व पोषक तत्व अवशोषित नहीं कर पाने के कारण पौधों की वृद्धि काफी धीमी रहती है और उत्पादन भी कम मिलता है। काजरी में हुये अनुसंधान में पाया गया है कि खीरे को कोल्ड टोलरेंट जंगली कद्दू (फिग लीफ गौर्ड–Cucurbita ficifolia) के मूलवृंत पर कलम करके उगाने से ग्राफ्टेड पौधों पर सर्दी का असर काफी कम होता है जिससे पौधों की बढ़वार अच्छी होने की वजह से फलों का उत्पादन अपेक्षाकृत कम से कम दो सप्ताह जल्दी व 30–35 प्रतिशत अधिक होता है।

सावधानियाँ:

ग्राफ्टिंग प्रक्रिया तकनीकी रूप से सक्षम उद्यमी अथवा प्रशिक्षित नर्सरी द्वारा। मूलवृंत बीज का गुणवत्तापूर्ण उत्पादन व प्रसारण पर्वतीय भागों खासकर ऊटी (TN) जहां यह प्रकृतिक रूप से उगता है, में संभव।

प्रौद्योगिकी-38 : टमाटर में कलम (ग्राफ्टिंग) तकनीक द्वारा सामान्य दशा व कम पानी की दशा में अधिक उत्पादन

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

खीरे की भांति राजस्थान के पश्चिमी भाग में में टमाटर की फसल पर भी जलवायु मृदा व पानी की निम्न गुणवत्ता का विपरीत प्रभाव पड़ता है जिससे आशा के अनुरूप उत्पादन नहीं हो पाता। काजरी में ग्राफ्टिंग पर किए गए सतत अनुसंधान प्रयासों से टमाटर के उत्पादन में अच्छी वृद्धि पायी गयी है। असीमित बढ़वार वाले पॉलीहाउस के संकर टमाटर (अभिरंग) को टमाटर की एक जंगली प्रजाति (Solanum pimpinelifolium cv- आईआईएचआर 1939) के मूलवृंत पर ग्राफ्टिंग करने से समान्य सिंचाई व 20% तक कम सिंचाई जल की दशा में 18–20% अधिक तथा 40% तक पानी की कमी की दशा में उगाये गए टमाटर को किस्म अर्का विकास के मूलवृंत पर ग्राफ्टिंग करने से समान्य की अपेक्षा 35 प्रतिशत तक अधिक उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इसके अलवावा मृदा जनित रोगों का भी इनपर प्रकोप काफी कम पाया गया। यह तकनीक पॉलीहाउस में टमाटर के सफल व समन्वित उत्पादन प्राप्त करने में एक महत्वपूर्ण योगदान प्रदान कर सकती है। जल उत्पादकता की दृष्टि से प्रति किलोग्राम पॉलीहाउस मंध समान्य संकर किस्म के टमाटर उत्पादन करने हेतु 42–44 लीटर पानी की तुलना में ग्राफ्टेड पौधों को 31 से 36 लीटर पानी की आवश्यकता होती है।

पॉलीहाउस में फलों से लदे ग्राफटेड टमाटर के पौधे

सांकुर व मूलवृंत सफल जुड़ाव भाग (ग्राफट यूनियन)

सावधानियाँः

खीरे की ग्राफ्टिंग की भांति टमाटर की ग्राफ्टिंग प्रक्रिया तकनीकी रूप से जटिल नहीं होने के कारण प्रशिक्षण प्राप्त कर किसान तथा नर्सरी उद्यमी इसे अपना सकते हैं। मूलवृंत के बीज भी काजरी से प्राप्त कर किसान स्वयं पुनरुत्पादित कर सकते हैं।

प्रौद्योगिकी-39 : शुष्क क्षेत्र में टमाटर की सफल खेती के लिए उपयुक्त संरक्षित संरचना

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्र, राजस्थान

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

पॉलीहाउस टमाटर (किस्म–NSS–4266) की फसल को तीन संरक्षित संरचनाओं (प्रकृतिक संवाहक पॉलीहाउस, कीटरोधक नेट हाउस और शेड नेट हाउस) में तीन सिंचाई स्तर से पानी देकर मूल्यांकन किया गया। सभी पादप वृद्धि मापदंड हवादार पॉलीहाउस में 100 प्रतिशत सिंचाई स्तर के साथ सर्वोत्तम पाये गये। हवादार पॉलीहाउस में टमाटर में वृद्धि के मापदंड में सबसे उच्चतम थे। इसी प्रकार फलों की लंबाई, चौड़ाई, फल संख्या, फलों का वजन और उत्पादन प्रति वर्गमीटर (13.65 कि.ग्रा.) हवादार पॉलीहाउस में 100 प्रतिशत सिंचाई स्तर के साथ अधिकतम प्राप्त हुई। पानी की उपयोग दक्षता हवादार पॉलीहाउस में अधिकतम 100 प्रतिशत स्तर (21.18 कि.ग्रा./घन मीटर) दर्ज की गयी। इससे यह ज्ञापित हुआ है, की शुष्क क्षेत्र में टमाटर का उत्पादन एवं पानी की उपयोग दक्षता हवादार पॉलीहाउस संरचना सबसे अधिक पाई गई है। प्रकृतिक संवाहक पॉलीहाउस में अन्य संरक्षित संरचनाओं की अपेक्षा टमाटर का अधिक उत्पादन व पानी की उपयोग दक्षता/खुले में खेती की तुलना में अधिकतम उत्पादन। हवादार पॉलीहाउस में प्रति वर्गमीटर टमाटर की उपज (13.65 कि.ग्रा./वर्ग मीटर) दर्ज की गयी। पानी की उपयोग दक्षता हवादार पॉलीहाउस में अधिकतम (21.18 कि.ग्रा./घन मिटर) है।

सावधानियाँः

- टमाटर उत्पादन के लिए हवादार पॉलीहाउस सबसे उचित संरचना हैं।
- पॉलीहाउस सब्जी उत्पादन के लिए किसानों को उसके बारे में पूर्णतः जानकारी होनी जरूरी हैं।

प्रौद्योगिकी-40 : लसोड़े के फलों का निर्जलीकरण

संस्तुत कृषि जलवायु : शुष्क व अर्धशुष्क क्षेत्र

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

लसोड़े के फलों को सुखाकर परिरक्षित करने की बहुत ही सरल विधि विकसित की गई है। सबसे पहले फलों को डण्ठल सहित 0.1 प्रतिशत पोटेशियम मेटाबाइसल्फाइट घुलेपानी में उबाल लें। जब फल दबाने से हल्के नरम होने लगे तब पानी से बाहर निकालकर पंखे के नीचे इस तरह सुखाएं कि फलों के चारों ओर कहीं भी पानी की बून्दे नजर नहीं आवें। जब फल ठंडे हो जाएं तब इसके डण्ठल अलग करके एक–एक फल को अंगूठे व अंगुलियों के बीच दबा कर गुठली अलग कर लें। अब इन्हें धूप या बिजली चालित ड्रायर या सोलर ड्रायर में तब तक सुखाएं जब तक फल हाथ से दबाने पर टूटने लगे (5–8 प्रतिशत नमी) तथा कुरकुरे हो जाएं। इस अवस्था में इनको पोलीथीन थैलियों या प्लास्टिक जार में पैक करके भण्डारण करें। अधिक फल उत्पादन की स्थिति में जब बाजार में भाव अच्छे नहीं मिलते हों या ऑफसीजन फलन से प्राप्त फलों का समुचित उपयोग कर सकते हैं। निर्जलित फलों का एक वर्ष तक भण्डारण किया जा सकता हैं।

सावधानियाँः

फलों को उबालने की अवधि का ध्यान रखना चाहिये कि इन्हें अधिक समय तक नहीं उबालना चाहिये अन्यथा फल फटने लगते हैं, जिससे उत्पाद की गुणवत्ता प्रभावित होती हैं।

भाकृअनुप-राष्ट्रीय बीजीय मसाला अनुसंधान केन्द्र

अजमेर

प्रौद्योगिकी-41 : अजमेर धनिया-1

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

औसत उपज प्रति हेक्टेयर 12 से 12.5 किलो बीज होता है। पौधे लंबे और खड़े होते हैं। बीज आकार में मध्यम होते हैं, आकार में गोल होते हैं और निर्यात के उद्देश्य के लिए उपयुक्त होते हैं। यह किस्म ऑफ–सीजन के दौरान हरी पत्तियों के लिए भी उपयुक्त हैं।

प्रौद्योगिकी-42 : अजमेर धनिया-2

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

पौधे अर्ध खड़े होते हैं, बीज आकार अंडाकार और निर्यात उद्देश्य के लिए उपयुक्त होते हैं। पौधे पित्त के लिए प्रतिरोधी हैं और पाउडर फफूंदी के प्रति सहनशीलता रखते हैं।

प्रौद्योगिकी-43 : अजमेर सौंफ-3

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

इस किस्म की औसत उपज 20–25 कुन्तल प्रति हेक्टेयर है। इस प्रजाति का अखिल भारतीय स्तर पर मूल्यांकन कर वर्ष 2019 में विमोचन किया गया है।

प्रौद्योगिकी-44 : अजमेर मैथी-5

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

बीज बोल्ड एवं आकार में बड़ा है। फसल 106–141 दिन, 17–18 कुन्तल/हेक्टेयर की औसत बीज उपज के साथ परिपक्व होने के लिए लेती है। ए.जी.एफ.–5 के बीज में उच्च एंटीऑक्सीडेंट गुण (66.4 मिलीग्राम बीएचटीजी–1 बीज) दिखाए गए। पाउडर फफूंदी और अल्टररिया ब्लाइट के लिए मामूली प्रतिरोधी।

प्रौद्योगिकी-45 अजमेर कलौंजी-20

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

यह प्रजाति 140–150 दिनों में परिपक्व होती है। यह राजस्थान के सभी हिस्सों के लिए उपयुक्त है। इस किस्म की औसत उपज 10–12 कुन्तल/हेक्टेयर है। निर्धारित बुवाई समय 15–30 अक्टूबर है। इस किस्म में 28 प्रतिशत कुल तेल और 0.7 प्रतिशत आवश्यक तेल शामिल हैं।

प्रौद्योगिकी-46 : बीजीय मसालों के मूल्य सवंर्धित उत्पाद

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

कुल 12 विभिन्न प्रकार के मूल्य सवंर्धित उत्पादों की विधि एवं उत्पादन की तकनीकी का हस्तांतरण किया गया है जिससे मुख्य रूप से सौंफ, सोवा, धनिया के पेय पदार्थ (आर टी एस, स्कावश, साइडर) और मैथी के बिस्किट और सोवा प्राश आदि है।

प्रौद्योगिकी-47 जैविक अगत उत्पादन

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

जैव नियन्त्रणकों एवं वानस्पतिक कीटनाशी साबुन और तेल का वृहद् उत्पादन प्रारूप विकसित किया गया है। इसके साथ ही पी एस बी जैव उर्वरक की स्थानीय प्रजाति सौंफ एवं अन्य बीजीय मसालों में जैव उर्वरक के रूप में प्रयोग करने हेतु विकसित किया गया है।

अन्य प्रौद्योगिकी

- जीरे में पंक्ति बुवाई एवं बीजीय मसालों में रासायनिक खरपतवारनाशी की संस्तुति से उपत्पादकता एवं लाभ में वृद्धि प्राप्त होती है।
- जीरे में उकठा एवं झुलसा रोग से बचाव हेतु फफूंदनाशी के सारणीबद्ध उपचार तकनीकी का प्रयोग बहुत लाभकारी है।
- निम्न तापमान पर मसाला पिसाई तकनीकी से मसालों की गुणवत्ता का संरक्षण।
- विभिन्न बीजीय मसालों के जैविक उत्पादन का मोडूल।

श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय जोबनेर

अखिल भारतीय समन्वित शुष्क फल अनुसंधान परियोजना

प्रौद्योगिकी-48 : बेल के जड़ गलन रोग एवं जड़ छेदक कीट का समेकित प्रबन्धन

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं व लाभः

बेल के जड़ गलन रोग एवं जड़ छेदक कीट के नियंत्रण हेतु बगीचे में खाद देते वक्त कार्बेन्डाजिम 50 डब्लू–पी–(20 ग्राम प्रति पौधा) के साथ क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी. (50 मिली प्रति पौधा) को मिलाकर 15–20 दिनों के अन्तराल से प्रयोग करें। इस पद्धति से जड़ छेदक कीट एवं जड़ गलन रोग की रोकथाम एक साथ होना मुख्य विशेषता है। सर्वेक्षणों के दौरान इस रोग से 14 प्रतिशत तक पादप मृत्यु पाई गई है, जिसको नियंत्रित कर फल उत्पादन व आमदनी बढ़ाई जा सकती है।

सावधानियाँः

- रोग ग्रस्त पादपों से सिंचाई का पानी व अन्य कृषण यंत्रों को सम्पर्क में नहीं आने देवें, अन्यथा रोग की शीघ्र फैलने की सम्भावनाएं अधिक बढ़ जाती है।
- रोग ग्रस्त पादप व अवशेषों को नष्ट करना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-49 : बेर की विभिन्न फल अवस्थाओं पर छाछ्या रोग नियंत्रण में जैव रासायनों की भूमिका

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं व लाभः

बेर के छोटे आकार (मटर एवं मूंगफली आकार) के फल छाछ्या रोग से अत्यधिक ग्रसित होते है एवं आकार बढ़ने पर फलों में फीनोल की मात्रा बढ़ जाती है, इसलिए बड़े फल रोग ग्रसित नहीं होते है। अतः बागवानों को सलाह दी जाती है कि छोटे फलों को छाछ्या रोग से बचाने हेतु सिफारिश की हुई कवकनाशी (डाइनोकेप/1 मि.ली. प्रति लीटर) का अगेती अवस्था पर छिड़काव करावें। छोटी अवस्था में फलों को रोग ग्रस्त होने से बचाकर उत्पादन एवं आमदनी को बढ़ाया जा सकेगा।

सावधानियाँः

- फल की कच्ची अवस्था एवं छोटे आकार पर रोग प्रकट होते ही अनुसंशा के अनुसार कवकनाशी का छिड़काव करें।

प्रौद्योगिकी-50 : बेर के छाछ्या रोग का किफायती नियंत्रण

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं व लाभः

बेर के छाछ्या रोग के नियंत्रण हेतु माइक्लोब्यूटानिल (10 प्रतिशत घुलनशील चूर्ण) का आधा ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल कर 15 दिन के अन्तराल पर दो छिडकाव करें यह एक प्रभावनाशी एवं किफायती रोग नियंत्रण। डाइनोकेप (कैराथेन) को उपरोक्त को एवज में प्रभावशाली, किफायती एवं नई कवकनाशी को प्रयोग किया गया। पूर्व में सिफारिश एवं प्रयोग में ली जा रही डाइनोकेप (कैराथेन) की तुलना में प्रभावशाली एवं किफायती होना अच्छा पाया गया है।

सावधानियाँः

- रोग प्रकट होते ही इस कवकनाशी का छिड़काव प्रारम्भ करें।

प्रौद्योगिकी-51 : आँवले के रोली रोग के संक्रमण एवं फैलाव में जलवायु घटकों का प्रभाव

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का विवरण, विशेषताएं व लाभः

जलवायु घटकों एवं आँवला रोली रोग का सम्बन्ध में किया गया अध्ययन दर्शाता है कि रोग की शुरूआत सुबह एवं शाम की वायुमण्डलीय आपेक्षित आर्दता क्रमशः 85 एवं 62 प्रतिशत एवं 32^{o} से. अधिकतम व 24^{o} से. न्यूनतम तापक्रम पर होती है। अतः रोगनिरोधी कवकनाशी का छिडकाव जुलाई माह के अन्तिम सप्ताह में अभिशंषित की जाती है। क्षेत्र में प्रचालित आपेक्षित आर्द्रता एवं तापमान को ध्यान में रखते हुए रोग नियंत्रण में सहुलित होना। मौसम को ध्यान में रखकर सिफारिश की गई कवकनाशी का समय पर उपयोग करना।

सावधानियाँः

- वातावरण में उतार–चढ़ाव को मध्यनजर रखना।

प्रौद्योगिकी-52 : आँवला के रोली रोग नियंत्रण हेतु छिड़काव समय सारिणी का निर्धारण

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-।।। ए)

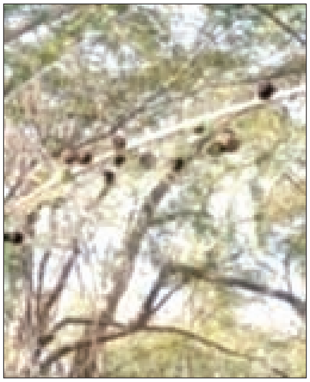

प्रौद्योगिकी का विविरण, विशेषताएं व लाभः

आँवला के रोली रोग नियंत्रण हेतु रोग प्रकट होते ही पेड़ों पर क्लोरोथेलोनिल 0.2 प्रतिशत घोल के चार छिड़काव 15 दिवस के अन्तराल कर रोग को नियंत्रित किया जा सकता है। इस फंफूदनाशी से रोली रोग के साथ डाईबैक का भी नियंत्रित होना फायदेमंद होता है।

सावधानियाँः

- दवा का छिड़काव सही समय पर सही मात्रा के साथ करना।

प्रौद्योगिकी-53 : आँवला के रोली रोग व पत्ती पिटिका कीट का समन्वित कीट-व्याधि प्रबन्ध

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-।।। ए)

प्रौद्योगिकी का विविरण, विशेषताएं व लाभः

अप्रैल माह में एजाडिरेक्टिन 0.3 प्रतिशत के दो छिड़काव 15 दिन के अन्तराल पर एवं अगस्त माह में क्लोरोथेलोनिल 0.2 प्रतिशत 15 दिन के अन्तराल पर साथ में दो छिडकाव एण्डोसल्फान 0.07 प्रतिशत के 20 दिन के अन्तराल पर करने से रोली रोग व पत्ती पिटिका कीट के नियन्त्रण में प्रभावकारी असर पाया गया। कीट व रोग को एक साथ नियंत्रित कर अधिक उपज एवं आमदनी प्राप्त करना।

सावधानियाँ

- समय पर सही मात्रा के साथ दवा का छिड़काव करना तथा दवाईयाँ को आपस में मिलाकर छिड़काव नहीं करें।

प्रौद्योगिकी-54 : आँवला के फल तुड़ाई पश्चात् बीमारियों का प्रबन्धन।

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का विविरण, विशेषताएं व लाभ:

फल तुड़ाई पश्चात बीमारियों के प्रबन्धन हेतु आँवला के फलों को नीम पत्ती निचोड (5 प्रतिशत) या हल्दी कन्द निचोड़ (5 प्रतिशत) के घोल में डुबोकर निकालना, नीली सड़न फंफूद व एसपर्जिलस सड़न को नियन्त्रित किया जा सकता है। संश्लेषित कवकनाशियों के दुष्प्रभाव से बचना तथा बाजार में बढ़ती जैविक उत्पादों की पूर्ति कर अधिक लाभ प्राप्त करना।

सावधानियाँ:

- पादप निचोड़ की सही सान्द्रता का उपयोग करना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-55 : आँवला रोली रोग का जैविक नियन्त्रण।

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त, विवरण, विशेषताएं व लाभ:

आँवला रोली रोग के प्रभावशाली नियंत्रण हेतु क्लोरोथेलोनिल (0.2 प्रतिशत) या ट्राइकोडर्मा विरीडी (1 प्रतिशत) + क्लोरोथेलोनिल (0.1 प्रतिशत) के चार पर्णीय छिड़काव अभिशंषित है। प्रथम रोग निरोधी छिड़काव अगस्त माह के प्रथम सप्ताह में कर बाकी के तीन छिड़काव बीमारी दिखते ही 15 दिन के अन्तराल पर करें। कवकनाशियों के अवशेष को कुछ हद तक कम करना तथा जैविक उत्पाद प्राप्त करना।

सावधानियाँ:

- ट्राइकोडर्मा कल्चर छः माह से ज्यादा पुराना नहीं होना चाहिए।

प्रौद्योगिकी–56 : बेर में समन्वित कीट प्रबन्धन

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त, विवरण, विशेषताएं व लाभः

बेर में समन्वित कीट नियन्त्रण हेतु थॉवले की खुदाई कर 50 ग्राम मेलाथियान धूल प्रति वृक्ष मिलाना एवं सफेदलट के व्यस्कों से बचाव के लिए मानसून आगमन पर मोनोक्रोटोफास 0.05 प्रतिशत का वृक्षों पर छिडकाव साथ में फल मक्खी हेतु इसी दवा की एक मि.ली. प्रति लीटर पानी की मात्रा में मिलाकर फलों की मटर अवस्था पर छिड़काव करने से कीटों से पूर्ण सुरक्षा होती है। इस तकनीक द्वारा बेर में क्षति पहुचानें वाले कीटो की रोकथाम सफलतापूर्वक होना मुख्य विशेषता हैं। सर्वेक्षणों के दोरान बेर की फसल में कीटों द्वारा अत्यधिक क्षति होना पाया गया हैं। अतः इनके उचित प्रबन्ध द्वारा फल उत्पादन व आमदनी बढाई जा सकती हैं।

सावधानियाँः

बेर के पौधों की नियमित निगरानी रखे पौधों के पास खरपतवार नहीं पनपने दे एवं कीट का आर्थिक क्षति स्तर आने पर उचित नियन्त्रण करें।

प्रौद्योगिकी –57 : बेर की गुठली की सुरसरी (स्टोन विवल) का नियंत्रण

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त, विवरण, विशेषताएं व लाभः

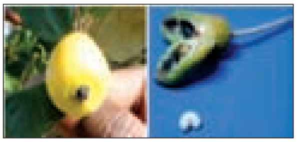

बेर की गुठली में लगने वाले सुरसरी के नियंत्रण हेतु ऐजाडिरेक्टीन 1 प्रतिशत की 1 मि.ली. दवा प्रति लीटर पानी में मिलाकर फल बनने से पहले पौधों पर छिड़के एवं दूसरा छिड़काव तीन दिन बाद करें । इस तकनीक द्वारा बेर की गुठली में सुरसरी द्वारा होने वाली क्षति को नियन्त्रित किया जा सकता हैं। इस तकनीकी के प्रयोग से गुणवत्ता युक्त फलों की प्राप्ति की जा सकती हैं। सर्वेक्षणों के दोरान इस कीट द्वारा 40 प्रतिशत तक फलों का क्षतिग्रस्त होना पाया गया हैं।

सावधानियाँः

- फल बनने से पहले इस पद्धति में बताये गये कीटनाशी का छिड़काव करें एवं दूसरा छिड़काव तीन दिन बाद करें।

प्रौद्योगिकी–58 : बेर की फलमक्खी का नियंत्रण

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त, विवरण, विशेषताएं व लाभः

बेर में फलमक्खी नियंत्रण हेतु फलों की मटर के दाने की अवस्था पर नीम बीज सत (NSKE) 5 प्रतिशत प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर पौधों पर छिड़काव करें। इस छिड़काव को 15 दिन के पश्चात् दोहरावें। नीम कीटनाशी द्वारा फलमक्खी का नियंत्रण सर्वेक्षणों के दौरान इस कीट द्वारा 10 से 15 प्रतिशत क्षति का होना पाया गया हैं। उचित समय पर सुझाये गये कीटनाशी का प्रयोग करके गुणवत्ता युक्त फलों की प्राप्ति की जा सकती है।

सावधानियाँः

कीटनाशी का छिड़काव फलों की मटर के दाने की अवस्था पर करें।

प्रौद्योगिकी–59 : आंवला में सूक्ष्म छिद्र भेदक (शॉट हॉल बोरर) की रोकथाम

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त, विवरण, विशेषताएं व लाभः

आंवला में सूक्ष्म छिद्र भेदक (शॉट हॉल बोरर) की रोकथाम के लिए फरवरी के दूसरे सप्ताह में 2.8 मि.ली. इमिडाक्लोप्रिड 17.8 SL, 5 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50 WP एवं 400 ग्राम गेरू (लाल मिट्टी) का एक लीटर पानी में पेस्ट बनाकर तने पर जमीनी स्तर से लेकर शाखाओं की शुरूआत तक लगभग एक मीटर ऊँचाई तक ब्रुश की सहायता से लेप करें। इस कीट के प्रकोप से पोधे में तने के आधार से नई शाखाएं निकलना आरम्भ हो जाती हैं। कीट की सही समय पर रोकथाम करने पर पौधे की गुणवत्ता के साथ–साथ फलों की गुणवत्ता में भी सुधार होता हैं।

सावधानियाँः

- तकनीकी का प्रयोग समय पर करें।

प्रौद्योगिकी-60 : आँवला में लीफ गॉल मिज की जनसंख्या की गतिशीलता का अध्ययन

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त, विवरण, विशेषताएं व लाभः

आवला लीफ गॉल मिज, एस्फोंडिलिया फेलन्थी के जनसंख्या की गतिशीलता के अध्ययन से पता चला कि आवला लीफ गॉल मिज की क्षति फरवरी के महीने में शुरुआत हुई एवं सितंबर के महीने में अपने अधिकतम स्तर पर पाया गया। तापमान में वृद्धि के साथ बढ़ती कीट की आबादी और सापेक्ष आर्द्रता और वर्षा के बढ़ने के साथ कीटों की आबादी घटती पाया गय। मौसम विज्ञान के अध्ययन से पता चला है कि कीटों की आबादी न्यूनतम और अधिकतम तापमान के साथ सकारात्मक रूप से सहसंबद्ध एव सापेक्ष आर्द्रता और वर्षा के साथ नकारात्मक रूप से सहसंबद्ध है। इस तकनीकी से कीट के जीवन की गतिशीलता का पता चलता हैं। कीट की सही समय पर रोकथाम करने पर पौधे की गुणवत्ता के साथ–साथ फलों की गुणवत्ता में भी सुधार होता है।

सावधानियाँः

- इस तकनीकी की जानकारी द्वारा कीट की सही समय पर रोकथाम की जा सकती हैं।

प्रौद्योगिकी-61 : आँवला में पत्ती फफोला कीट (लीफ गॉल मिज) एवं तना संपुट लट (स्टेम केपसूल केटरपिलर) के द्वारा होने वाले नुकसान से बचाव के उपाय

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त, विवरण, विशेषताएं व लाभः

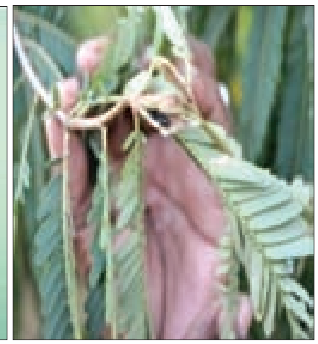

ऑवले में पत्ती फफोलक कीट द्वारा पत्ती की क्षति की रोकथाम के लिए मार्च के महीने में ईमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. का 0.3 मि.ली. प्रति लीटर घोल का 20 दिन के अंतराल से दो छिड़काव करें एवं तना संपुट कीट द्वारा शाखा की क्षति की रोकथाम के लिए मानसून की शुरूआत होने पर स्पिनोसेड 45 एस.स. का 0.1 मि.ली. प्रति लीटर घोल का 20 दिन के अन्तराल से दो छिडकाव करें एवं क्षतिग्रस्त शाखाओं को हटा देवें। इस पद्धति द्वारा आंवले में क्षति पहुंचाने वाले मुख्य कीटों की रोकथाम इसकी विशेषता हैं। इस तकनीकी द्वारा अधिक फलोत्पादन करके आमदनी बढ़ायी जा सकती हैं।

सावधानियाँः

- सही समय पर सुझाये गये कीटनाशियों का उचित मात्रा में प्रयोग करें।

प्रौद्योगिकी-62 : आँवला में सूक्ष्म छिद्र भेदक (शॉट हॉल बोरर) जाइलेबोरस स्पी. की मौसमी गतिविधि

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-।।। ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

आँवला सूक्ष्म छिद्र भेदक ने अगस्त से सितंबर के महीने में अपनी चरम गतिविधि का संकेत दिया एव इसका संक्रमण जमीनी स्तर से 30 सेमी ऊंचाई तक अधिकतम पाया गया। इस तकनीक के द्वारा आंवला में सूक्ष्म छिद्र भेदक के द्वारा होने वाली क्षति के समय का पता चलता हैं। सही समय पर प्रबन्धन का कार्य करने से पौधों में होने वाली क्षति/पौधों को सूखने से बचाया जा सकता है।

सावधानियाँः

- कीट द्वारा होने वाली क्षति से पहले प्रबन्धन का कार्य शुरू कर देना चाहिये।

प्रौद्योगिकी-63 : अनार में छालभक्षी कीट का नियंत्रण

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-।।। ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

अनार में छाल भेदक कीट नियंत्रण हेतु विभिन्न तरीकों के अध्ययन में पाया गया कि कीट द्वारा तने पर बनाएं गए छिद्र में डाइक्लोरोवोस (0.08 प्रतिशत) अथवा मोनोक्रोटोफोस (0.08 प्रतिशत) अथवा फेनवेलेरेट (0.04 प्रतिशत) अथवा कार्बरिल (0.1 प्रतिशत) का छिड़काव अथवा उपरोक्त कीटनाशियों के 5 प्रतिशत घोल का अर्न्तवाही प्रवेश कराकर और छिद्र को मिट्टी से बन्द करना सर्वाधिक उपयुक्त पाया। इस तकनीक के प्रयोग से छाल भेदक कीट को सफलतापूर्वक नियन्त्रित किया जा सकता हैं। समय पर प्रबन्धन के तरीके अपनाने पर कीट द्वारा पोधे की टहनियों/शाखाओं को होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है। इससे पौधे के उत्पादन में वृद्धि करके अच्छा लाभ अर्जित किया जा सकता हैं।

सावधानियाँः

- तने पर छिद्र के दिखाई देते ही, सुझाये गये उपचारो में से किसी एक का सही मात्रा में प्रयोग करें।

प्रौद्योगिकी-64 : बेर में पाला सहिष्णु अनुप्रयोग

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

बेर में पाला पड़ने से उसकी उपज में काफी कमी आती है क्योकि पाला पड़ने से बेर की पत्तिया झुलस जाती है जिससे बेर की उपज कम हो जाती है बेर की प्रजाती उमरान पर सल्फुरीक अम्ल, साइकोसिल, एबस्सेसिक अम्ल पोलीएमाइन व सुकरोज इन दवाईयों को छिड़का गया। सल्फुरिक अम्ल के प्रभाव से इन पौधों में पाले से नुकसान कम हुआ, सल्फुरिक अम्ल की 0.5 प्रतिशत मात्रा के हिसाब से पौधों में पर्ण छिड़काव करने से पाला का प्रभाव पौधों पर कम देखा गया। इन रसायनों में सल्फुरिक अम्ल का 0.5 प्रतिशत का घोल पौधों पर छिड़कने से पाला में पत्तिया नहीं झुलसती है जिससे उपज में बढ़ोतरी होती है।

सावधानियाँः

- इन रसायनों का घोल बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिए की ये रसायन हाथों को छूना नहीं चाहिए इसलिए घोल बनाते समय हाथों में दस्ताने पहन कर काम करना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-65 : राजस्थान के बेर उद्यानों में पौषक तत्वों का अध्ययन

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-।।। ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

राजस्थान के जिलों में जहा बेर के उधान लगे हुए हैं उनमें भ्रमण करके पौधों की पत्तियों को लाकर उनमें पोषक तत्वों की मात्रा का पता लगाया गया। इन उद्यानों की उपज कितनी है ये किसानों से पुछा गया। इन पोषक तत्वों का विश्लेषण करने से इन उधानों की कम उपज का कारण पता लगा कि इनमें नत्रजन 2.66 फास्फोरस 0.34 केल्सियम 1.54 और मैगनेशियम 0.77 प्रतिशत मिली। अच्छे उपज के लिये किसानों को उर्वरकों की मात्रा ड्रिस नोर्मस के अनुसार बढ़ानी चाहिये ताकि पत्तियों में इन चारों तत्वों की मात्रा 3.08, 0.42, 1.81 और 1.03 स्तर तक हो जाये। डरिस नॉर्म्स से पौधों में पाए जाने वाले तत्वों की मात्रा को मालूम करते है। यदि कोई तत्व कम या ज्यादा होता है तो इन तत्वों को उपयुक्त मात्रा में मृदा में डालकर पौधों की उपज बढ़ा सकते हैं। इस तकनीक के उपयोग में लेने से हमे मृदा में कितनी मात्रा में ये पोषक तत्व उपलब्ध है उसका पता लगता है और हमें इन तत्वों को कितनी मात्रा में मृदा में डालना है इसका ज्ञान होता है जिससे निश्चित रूप से पौधों में उपज बढ़ती है।

सावधानियाँः

- ड्रिस नार्मस की विस्तृत जानकारी से पौधों में उर्वरक की संस्तुति देवें।

प्रौद्योगिकी-66 : बेर में लवण सहिष्णुता अध्ययन

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

बेर की दो प्रजातियो जिनका नाम झड़बेर (*जिजिफस रोटंडीफोलिया*) व झड़बेर (*जिजिफस नुमुलेरिया*) है इनको गमलों में उगाया गया व विभिन्न लवणता का पानी जैसे इ.सी. 5, 10, 15 और 20 डेसी साइमन/मीटर से सिंचाई की गई। इन दोनों जीनोटाइप का प्रयोगशाला में अध्ययन से पता लगा कि झड़बेर (*जिजिफस रोटंडीफोलिया*) सभी लवणता वाले जल से सिंचाई करने के बावजुद भी इसमे अच्छी वृद्धि पाई गई। इस प्रयोग से यह निष्कर्ष निकलता है कि बेर में मूलवृन्त के रूप में झड़बेर (*जिजिफस रोटंडीफोलिया*) का ही लवणता वाले उद्यानो में प्रयोग करें। बेर में मूलवृन्त के रूप में झड़बेर (*जिजिफस रोटंडीफोलिया*) का ही लवणता वाले उद्यानो में प्रयोग करने से पौधों की वृद्धि अच्छी होती है।

झड़बेर

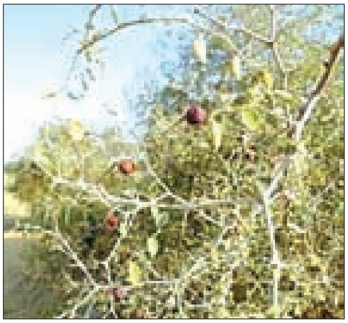

झड़बेर

सावधानियाँः

- घोल बनाते समय हाथों में दस्ताने पहन कर काम करना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-67 : बेर में प्रवर्धन

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

विभिन्न प्रवर्धन तकनीकों में स्वस्थाने बीज की बुआई कर बेर की इच्छित कलिका द्वारा कलिकायन विधि सर्वश्रेष्ठ पाई गई है। प्रवर्धन हेतु कलिकायन सफलतम विधि है।

सावधानियाँः

- उचित परिपक्वता एवं आकार की कलिका लेकर कलिकायन करें।

प्रौद्योगिकी–68 : बेर में पोषण

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

बेर वृक्षों में जुलाई माह में 250 ग्राम नत्रजन, 500 ग्राम फॉस्फोरस एवं 50 ग्राम पोटाश एवं 250 ग्राम नत्रजन नवम्बर माह में देने पर अधिकतम फल उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। पौधों को संतुलित पोषक तत्व प्राप्त होना एवं पौधों की अधिकतम वृद्धि के साथ–साथ अधिक फल उत्पादन प्राप्त होता है।

सावधानियाँः

- पोषक तत्व देने का समय एवं मात्रा का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

प्रौद्योगिकी–69 : बेर में मूलवृन्त परीक्षण

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

चार मूलवृन्तों जैसे– जिझीपस न्यूमूलेरिया, जिझीपस रोटन्डीफोलिया, जिझीपस मोरिशियाना किस्म सुखावनी एवं जिझीपस मोरिशियाना किस्म टिकड़ी पर उमरान व गोला के सांकुर टी चश्मा पद्धति द्वारा चढ़ा कर अध्ययन में निष्कर्ष निकाला गया कि गोला सांकुर का चश्मा जिझीपस रोटन्डीफोलिया मूलवृन्त पर करने से सर्वाधिक वृक्ष फैलाव, तने की मोटाई, फलोत्पादन प्रति वृक्ष के साथ–साथ फलों की गुणवत्ता भी सर्वाधिक होती है। शीघ्र एवं सर्वाधिक वृक्ष फैलाव तथा अधिक फलोत्पादन प्राप्त होता है।

सावधानियाँ

- मूलवृंत हेतु बीज लेने के लिए इस प्रजाति की सही पहचान करना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-70 : बेर की किस्म का चयन।

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

बेरों की चार किस्में– गोला, उमरान, कैथली व चौंमू लोकल के जोबनेर वातावरण में अध्ययन से निष्कर्ष निकला कि गोला किस्म राजस्थान के शुष्क क्षेत्र में उगाई जाने वाली उत्कृष्ट किस्म है। इससे अधिक उत्पादन प्राप्त होता है।

सावधानियाँः

- विश्वश्नीय स्त्रोतों से गोला किस्म के पौधे प्राप्त करें।

प्रौद्योगिकी-71 : आँवले में प्रवर्धन अध्ययन

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

आँवले में मध्य अगस्त के समय पैबन्दी चश्मा पद्धति द्वारा प्रवर्धन सर्वाधिक (73 से 85 प्रतिशत सफलता) उचित पाया गया। सफलतम प्रवर्धन विधि द्वारा गुणवत्ता युक्त/अधिक पौधे तैयार होते हैं।

सावधानियाँः

- आँवले में मध्य अगस्त में पैबन्दी चश्मा चढ़ाना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-72 : आँवले में किस्म परीक्षण

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

सर्वाधिक उपज के आधार पर एन.ए.–7 किस्म शुष्क क्षेत्र में उगाने हेतु उत्कृष्ट किस्म पाई गई एवं अधिक फलोत्पादन एवं अधिक आमदनी प्राप्त की जा सकती है।

प्रौद्योगिकी–73 : आँवले में पाले से बचाव

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

आँवले में गन्धक अम्ल 0.5 प्रतिशत घोल के दो छिड़काव क्रमशः अक्टूबर के तीसरे व नवम्बर के प्रथम सप्ताह में करने पर पाले के दुष्प्रभाव में कमी होती है। पाले से पौधों को बचाव हाने पर फलोत्पादन बढ़ता है।

सावधानियाँः

- गन्धक के अम्ल का घोल बनाते समय सिफारिशानुसार मात्रा का सावधानीपूर्वक प्रयोग करना।

प्रौद्योगिकी–74 : अनार में फल का फटना

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

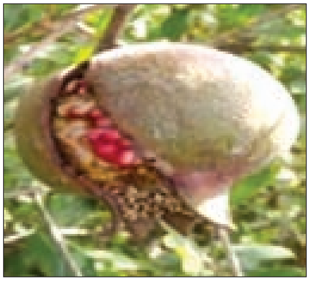

अनार में फल फटाव से बचाव हेतु बोरेक्स (0.2 प्रतिशत) के साथ जी. ए.–3 (100 पीपीएम) का पर्णीय छिड़काव कर फलों को फटने से बचाया जा सकता है। फलोत्पादन बढ़ाकर अधिक आमदनी प्राप्त होती है।

सावधानियाँः

- सिफारिशानुसार ही रसायनों की मात्रा का प्रयोग करें।

प्रौद्योगिकी–75 : अनार की किस्मों का चयन

संस्तुत कृषि जलवायु : राजस्थान का अर्ध-शुष्क पूर्वी मैदान (शस्य जलवायु क्षेत्र-III ए)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

परीक्षणों द्वारा अनार की जलोर सीडलेस किस्म सबसे उपयुक्त पाई गई।

स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय

बीकानेर

प्रौद्योगिकी-76 : बेल की किस्मों का बूंद-बूंद सिंचाई पद्धति में मूल्यांकन

संस्तुत कृषि जलवायु : जोन 1 बी (गर्म शुष्क क्षेत्र)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

बेल की किस्मों एन. बी. 5 तथा एन. बी. 9 की व्यावसायिक उत्पादन के लिए सिफारिश की गई है। बेल किस्म एन. बी. 5 तथा एन. बी. 9 औसत फल प्रति वृक्ष सबसे अधिक पाये गए। बेल को किन्नौं से कम पानी कि आवश्यकता होती है। बेल किस्म एन. बी. 5 तथा एन. बी. 9 की उन क्षेत्रों के लिये सिफारिश की गयी जहां पानी की कमी के कारण किन्नौं की खेती नहीं की जा सकती। पौधों की बढ़वार, फलन व फलों की गुणवत्ता 70% Etc में जलमात्रा अधिक पायी गयी।

प्रौद्योगिकी-77 : किन्नौं में चूसक कीटों के नियंत्रण हेतु कीटनाशकों का समन्वित कीट नियंत्रण

संस्तुत कृषि जलवायु : जोन 1 बी (गर्म शुष्क क्षेत्र)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

सिट्रस चेलसं के नियंत्रण हेतु diafenthiuron 50WP की 2 ग्राम /लिटर की दर प्रभावी है। जैववरणी कीटनाशकों में DC-tron प्लस दर 0.5%, Orcol–13 दर 0.1% व करंज का तेल दर 1: प्रभावी पाये गए। सिट्रस सफेद मक्खी के नियंत्रण हेतु diafenthiuron 50WP की 2 ग्राम/लिटर की दर प्रभावी है। जैववरणी कीटनाशक Novaluron 10EC दर 1 मिली प्रति लीटर, DC-tron प्लस दर 0.5% व करंज का तेल दर 1% प्रभावी पाये गए। सिट्रस मिली बग के नियंत्रण हेतु Diafenthiuron 50WP की 2 ग्राम/लिटर की दर प्रभावी है। जैववरणी कीटनाशकों में DC-tron प्लस प्रभावी पाया गया। सिट्रस माइट के नियंत्रण हेतु Propargite 57EC 2 मिली/लिटर की दर प्रभावी रहे हैं। जैववरणी कीटनाशकों में करंज का तेल दर 1.5% प्रभावी पाया गया।

- Diafenthiuron 50WP की 2 ग्राम/लीटर की दर से सिट्रस चेलसं में 78.8% कमी दर्ज की गयी।
- Diafenthiuron 50WP की 2 ग्राम/लीटर की दर से सिट्रस सफेद मक्खी में 82.3% कमी दर्ज की गयी।
- Diafenthiuron 50WP की 2 ग्राम/लीटर की दर से सिट्रस मिली बग में 79.0% कमी दर्ज की गयी।
- Propargite 57EC 2 मिली/लिटर की दर से सिट्रस माइट में 75.4% कमी दर्ज की गयी।
- किन्नौ में इस समन्वित कीट नियंत्रण विधि से एक साथ कई चूसक कीटों का नियंत्रण किया जा सकता है।

सावधानियाँ :

- छिड़काव हमेशा साफ–खुले मौसम में करें। बरसात होने की स्थिति में छिड़काव न करें।

प्रौद्योगिकी-78 : मिर्च में सिंचाई प्रबंधन

संस्तुत कृषि जलवायु : जोन 1 बी (गर्म शुष्क क्षेत्र)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

मिर्च में बूंद बूंद सिंचाई 1-0 Etc (LT) पर फल उत्पादन व गुणवत्ता में बढ़ोतरी के लिए प्रभावी पायी गयी। मिर्च की खेती के लिए अधिक पानी के आवश्यकता होती है। बूंद बूंद सिंचाई से कम जल में अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। पानी की बचत के कारण अधिक क्षेत्र में सिंचाई के साथ खेती कर सकते हैं। उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार व जल बचत होती है।

सावधानियाँः

- पौध रोपण शाम के समय करें। पौध रोपण के तुरंत बाद बूंद–बूंद सिंचाई अवश्य करें।

प्रौद्योगिकी-79 : फर्टिगेशन से मिर्च उगायें

संस्तुत कृषि जलवायु : जोन 1 बी (गर्म शुष्क क्षेत्र)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

मिर्च में सिफारिश की गयी उर्वरक मात्र का 120% (84 kg N, 60 kg P^2O^5, 60kg K^2O प्रति हेक्टेयर) 9 विभाजित दरों पर 13 दिनों के अंतराल से देने पर अधिकतम फल उत्पादन पाया गया। उर्वरकों के उचित प्रबंधन से उत्पादन व उर्वरकों के क्षमता में बढ़ोतरी होती है।

सावधानियाँः

- पौध रोपण शाम के समय करें। पौध रोपण के तुरंत बाद–बूंद–बूंद सिंचाई अवश्य करें।

प्रौद्योगिकी-80 : किन्नौं में सूक्ष्म पोषकतत्व सारणी

संस्तुत कृषि जलवायु : जोन 1 बी (गर्म शुष्क क्षेत्र)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

किन्नों में $FeSO^4$, $CuSO^4$, $ZnSO^4$ प्रत्येक का 0.5% की दर से पर्णीय छिडकाव, फूल आने से पहले, फल बनते समय (बेर के आकार के फल), और उसके 40 दिनों बाद करने से सर्वोत्तम उत्पादन प्राप्त किया गया। सूक्ष्म पोषकतत्व प्रबंधन से उत्पादन व उर्वरक की क्षमता में बढ़ोतरी पायी गयी।

सावधानियाँः

छिड़काव हमेशा साफ–खुले मौसम में करें। बरसात होने की स्थिति में छिड़काव न करें। छिड़काव के साथ स्टिकर का प्रयोग करें।

प्रौद्योगिकी-81 : किन्नौं का खुली-जड़ पौधरोपण

संस्तुत कृषि जलवायु : जोन 1 बी (गर्म शुष्क क्षेत्र)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताएं व लाभः

किन्नौं में खुली–जड़ पौध का 200 mg IBA प्रति लिटर व 1 ग्राम कार्बेडेनजीम (Carbandazim) प्रति लीटर से उपचारित कर गीली मोस घास में 48 घंटे तक रखा जा जाय तथा इस तरह के पौधों का रोपण सितंबर–अक्तूबर व फरवरी माह में सफलता पूर्वक किया जा सकता है। यह तकनीकी परिवहन व्यय को कम करती है। छोटे आकार की कम वजन की पैकिंग में अधिक पौधों का परिवहन किया जा सकता है। विद्यमान प्रक्रिया की तुलना में यह तकनीकी परिवहन व्यय को कम करती है।

सावधानियाँः

- किन्नौं में खुली–जड़ पौध को सिर्फ 48 घंटों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। 48 घंटों के भीतर रोपण किया जाना चाहिए।

प्रौद्योगिकी–82 : बैंगन में उर्वरक प्रबंधन

संस्तुत कृषि जलवायु : जोन 1 बी (गर्म शुष्क क्षेत्र)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

खरीफ बैंगन में सिफारिश की गयी उर्वरक मात्र का 80ः (96 kg N, 64 kg P^2O^5, 48 kg K^2O प्रति हेक्टेयर) 12 विभाजित दरों पर 10 दिनों के अंतराल से देने पर सर्वोतम उत्पादन पाया गया। उर्वरकों के उचित प्रबंधन से उर्वरक की बचत, उत्पादन व उर्वरकों की क्षमता में बढ़ोतरी पायी गयी।

सावधानियाँः

पौध रोपण शाम के समय करें। पौध रोपण के तुरंत बाद बूंद–बूंद सिंचाई अवश्य करें। गर्मी के मौसम में सिंचाई शाम के समय करें।

प्रौद्योगिकी–83 : बैंगन में सिंचाई प्रबंधन

संस्तुत कृषि जलवायु : जोन १ बी (गर्म शुष्क क्षेत्र)

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

बैंगन में बूंद–बूंद सिंचाई 0.8 Etc पर, मल्च के साथ में सर्वोत्तम पायी गयी। सतही सिंचाई की तुलना में दी गयी तकनीकी से 34.09% जल बचत होती है। बूंद–बूंद सिंचाई 1.0 Etc की तुलना में दी गयी तकनीकी से 15.68% जल बचत होती है। बूंद बूंद सिंचाई तकनीकी से कम जल में अधिक उत्पादन लिया जा सकता है। पानी की बचत के कारण अधिक जमीन में सिंचाई के साथ खेती कर सकते हैं। उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार तथा जल बचत भी होती है।

सावधानियाँः

- पौध रोपण शाम के समय करें। पौध रोपण के तुरंत बाद बूंद–बूंद सिंचाई अवश्य करें।

जोधपुर कृषि विश्वविद्यालय

जोधपुर

प्रौद्योगिकी-84 : टमाटर की फसल में भूमि का ऊर्ध्वधर उपयोग

संस्तुत कृषि जलवायु : जोन IV&A II&B

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

टमाटर की लगातार बढने वाली एवं झाड़ीनुमा किस्मों को 1:1 में बुवाई कर तारबंदी विधि से सधाई करना है। इस प्रौद्योगिकी से फल की गुणवत्ता, उत्पादन एवं फलनकाल में वृद्धि होती है। तकनीकी से उपज में 10 प्रतिशत बढ़ोत्तरी एवं फल उपलब्धता में वृद्धि होती है।

सावधानियाँः

- लगातार बढ़ने वाली एवं झाड़ीनुमा किस्मों को सही अनुपात 1:1 में लगाना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-85 : उठी हुई क्यारी में टमाटर की दो पंक्ति विधि से बुवाई

संस्तुत कृषि जलवायु : जोन IV&A II&B

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

उठी हुई क्यारी में बुवाई करने से उपज एवं गुणवत्ता में सुधार व 33 प्रतिशत पानी की बचत होती है। फल की गुणवत्ता, उत्पादन एवं फलनकाल में वृद्धि होती है। इस तकनीकी से उपज में 9.5 प्रतिशत बढ़ोत्तरी एवं फल सूखे क्षेत्र में लगने से गुणवत्ता में सुधार होता है।

सावधानियाँः

- क्यारी के चौड़ाई 90 सेमी व नाली 45 सेमी की रखनी चाहिए तथा सिंचाई केवल नाली क्षेत्र में ही करें।

प्रौद्योगिकी-86 : पपीता की फसल विन्यास में परिवर्तन कर उत्पादन लागत में कमी

संस्तुत कृषि जलवायु : जोन IV&A II&B

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

इस प्रौद्योगिकी में 2.5 मीटर × 1.6 मीटर पर रोपण कर ट्रेक्टर द्वारा निराई–गुड़ाई कर खरपतवार नियंत्रण आसानी व लाईनों की दूरी बढ़ाने से यंत्रीकरण में तथा कीट व रोगों के प्रकोप में कमी आती हैं। इस प्रौद्योगिकी में पपीता की फसल लगाने से उपज में 12.5 प्रतिशत बढ़ोत्तरी होती है तथा 19000 रूपये/हेक्टेयर लागत में कमी आती है व प्रति हेक्टेयर 2500 पौधों का रोपण किय जा सकता है।

सावधानियाँः

- खेत में समय समय पर यंत्रों द्वारा निराई–गुड़ाई करते रहना चाहिए।

प्रौद्योगिकी-87 : बेर में कंटाई-छंटाई के समय में परिवर्तन कर फल झड़न की समस्या का निराकरण

संस्तुत कृषि जलवायु : जोन IV&A II&B

प्रौद्योगिकी का संक्षिप्त विवरण, विशेषताए व लाभः

बेर में 15 मई की अपेक्षा 15 जून के बाद कंटाई–छंटाई करना उत्तम रहता है। कंटाई–छंटाई में 30 दिन की देरी करने से पुष्पन में लगभग 15–20 दिन की देरी होने से तापमान में कमी के कारण, बेर फल झड़ने व पुष्प सूखने की समस्या का निराकरण में सहायक होती है। बेर के फल उत्पादन में 15–17 प्रतिशत तक बढ़ोत्तरी हो सकती है।

सावधानियाँः

- पिछले वर्ष की बढ़वार का 30 प्रतिशत भाग ही काटना चाहिए।

हर कदम, हर डगर
किसानों का हमसफर
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

Agrisearch with a human touch

भाकृअनुप
ICAR

भाकृअनुप-केन्द्रीय शुष्क बागवानी संस्थान

बीछवाल, बीकानेर-334 006 (राजस्थान)

CENTRAL INSTITUTE FOR ARID HORTICULTURE
के शु बा सं